



Social Gravity: International Journal of Social Sciences and Humanities (SGIJSH)

(An International Peer-Reviewed (Refereed) Journal)

Website-<https://socialgravity.nobleinkresearch.com/1>

Email- editor@socialgravity.nobleinkresearch.com

ISSN Online: 3139-9312

ISSN Print: 3139-9304



दीनदयाल उपाध्याय के एकात्म मानववाद में वसुधैव कुटुंबकम की अवधारणा : एक दार्शनिक एवं समकालीन विश्लेषण

डॉ. प्रमोद कुमार सिंह¹, डॉ. शिल्पी सिंह^{2,*}

¹दर्शनशास्त्र विभाग,

राजकीय महाविद्यालय, लतीफ नगर, सरोजिनी नगर, लखनऊ, उत्तर प्रदेश, भारत

²गणित विभाग

राजकीय महाविद्यालय, लतीफ नगर, सरोजिनी नगर, लखनऊ, उत्तर प्रदेश, भारत

*Corresponding Author: sengarshilpi@gmail.com

Received: 12 August 2026, Revised: 30 August 2026, Accepted: 17 September 2026, Available Online: 28 September 2026

<https://doi.org/10.68219/fk4pxc80>

सारांश

प्रस्तुत शोध-पत्र में दीनदयाल उपाध्याय के एकात्म मानववाद और भारतीय दार्शनिक परंपरा की महत्वपूर्ण अवधारणा 'वसुधैव कुटुंबकम' के अंतर्संबंध का विश्लेषण किया गया है। एकात्म मानववाद मनुष्य को केवल आर्थिक या भौतिक इकाई के रूप में न देखकर उसके शारीरिक, मानसिक, बौद्धिक और आध्यात्मिक पक्षों के समन्वित विकास पर बल देता है। इसके केंद्र में व्यक्ति, परिवार, समाज, राष्ट्र और संपूर्ण मानवता के बीच अंतर्संबंध तथा परस्पर उत्तरदायित्व की भावना निहित है। दूसरी ओर, वसुधैव कुटुंबकम समस्त विश्व को एक परिवार के रूप में देखने वाली भारतीय दृष्टि का प्रतिनिधित्व करता है, जिसमें मानव-मात्र के कल्याण, सह-अस्तित्व, समरसता और विश्वबंधुत्व को महत्व दिया गया है। शोध का प्रमुख उद्देश्य यह स्पष्ट करना है कि उपाध्याय का एकात्म मानववाद किस प्रकार व्यक्ति और समष्टि के संबंध को व्यापक बनाते हुए सार्वभौमिक मानव-कल्याण की अवधारणा से जुड़ा है। अध्ययन में दीनदयाल उपाध्याय के मूल विचारों तथा भारतीय दार्शनिक परंपरा के संदर्भों का विश्लेषण करते हुए सामाजिक समरसता, अंत्योदय, सांस्कृतिक एकात्मता, मानव-केंद्रित विकास और प्रकृति के साथ संतुलन जैसे आयामों पर विचार किया गया है। साथ ही, वैश्वीकरण, सामाजिक-आर्थिक असमानता, पर्यावरणीय संकट और वैश्विक संघर्षों के समकालीन संदर्भ में इन अवधारणाओं की प्रासंगिकता का आलोचनात्मक परीक्षण किया गया है। अध्ययन यह रेखांकित करता है कि एकात्म मानववाद की समग्र मानव-दृष्टि और वसुधैव कुटुंबकम की विश्व-परिवार की भावना के बीच वैचारिक साम्य के महत्वपूर्ण आधार मौजूद हैं, यद्यपि इनके संबंध को समझने के लिए ऐतिहासिक, दार्शनिक और समकालीन संदर्भों का आलोचनात्मक विवेचन आवश्यक है।

प्रमुख शब्द: दीनदयाल उपाध्याय, एकात्म मानववाद, वसुधैव कुटुंबकम्, भारतीय दर्शन, विश्वबंधुत्व, समग्र मानववाद, सामाजिक समरसता, अंत्योदय, मानव-केंद्रित विकास, विश्व-कल्याण

1. प्रस्तावना

भारतीय चिंतन-परंपरा में मानव और समाज के संबंध को केवल व्यक्तिगत हितों अथवा भौतिक आवश्यकताओं के संदर्भ में नहीं देखा गया है, बल्कि व्यक्ति को व्यापक सामाजिक, सांस्कृतिक, नैतिक और आध्यात्मिक व्यवस्था का अभिन्न अंग माना गया है। भारतीय दर्शन की यह समग्र दृष्टि मनुष्य के कल्याण को समाज, प्रकृति और व्यापक विश्व-व्यवस्था के कल्याण से पृथक् नहीं करती। इसी व्यापक दृष्टिकोण की अभिव्यक्ति 'वसुधैव कुटुंबकम्' की अवधारणा में दिखाई देती है, जिसमें संपूर्ण पृथ्वी को एक परिवार के रूप में देखने की भावना निहित है [1]। यह अवधारणा मानव-मानव के बीच विभाजन की अपेक्षा पारस्परिकता, सह-अस्तित्व, सहयोग और लोककल्याण को प्राथमिकता प्रदान करती है। इसलिए वसुधैव कुटुंबकम् को केवल सांस्कृतिक आदर्श या नैतिक उक्ति के रूप में नहीं, बल्कि मनुष्य और विश्व के पारस्परिक संबंध को समझने वाली एक व्यापक दार्शनिक दृष्टि के रूप में भी देखा जा सकता है [2, 3]।

आधुनिक युग में विज्ञान, प्रौद्योगिकी और संचार के तीव्र विकास ने विश्व के विभिन्न समाजों को अभूतपूर्व रूप से परस्पर संबद्ध किया है। आर्थिक वैश्वीकरण, अंतरराष्ट्रीय व्यापार, डिजिटल संचार और ज्ञान के तीव्र प्रसार ने भौगोलिक सीमाओं के महत्व को कई स्तरों पर कम किया है। इसके समानांतर आर्थिक विषमता, सामाजिक विभाजन, सांस्कृतिक तनाव, पर्यावरणीय संकट, संसाधनों पर बढ़ता दबाव और विभिन्न प्रकार के वैश्विक संघर्ष भी सामने आए हैं। ऐसी परिस्थितियों में विकास की उस अवधारणा पर पुनर्विचार आवश्यक हो जाता है जो केवल उत्पादन, उपभोग और आर्थिक वृद्धि को प्रगति का प्रमुख मानदंड मानती है। मानव विकास को यदि सामाजिक उत्तरदायित्व, नैतिकता, प्रकृति के साथ संतुलन और व्यापक कल्याण से जोड़कर देखा जाए, तो भारतीय दार्शनिक परंपरा के समग्र दृष्टिकोण की समकालीन प्रासंगिकता पर विचार करना आवश्यक हो जाता है [4, 5]।

इसी संदर्भ में दीनदयाल उपाध्याय का **एकात्म मानववाद** विशेष महत्व रखता है। उपाध्याय ने आधुनिक राजनीतिक और आर्थिक चिंतन की उन प्रवृत्तियों के बीच एक ऐसी भारतीय वैचारिक दृष्टि प्रस्तुत करने का प्रयास किया जिसमें मनुष्य को उसके समग्र स्वरूप में समझने पर बल दिया गया। उनके विचार में मनुष्य को केवल आर्थिक प्राणी अथवा राजनीतिक इकाई के रूप में सीमित करना उसके वास्तविक स्वरूप को अपूर्ण रूप से समझना है। मनुष्य के शरीर, मन, बुद्धि और आत्मा के समन्वित विकास को महत्व देते हुए एकात्म मानववाद व्यक्ति और समष्टि के बीच अंतर्संबंध पर बल देता है। इस दृष्टि में व्यक्ति परिवार से, परिवार समाज से, समाज राष्ट्र से और व्यापक अर्थ में राष्ट्र मानवता से संबंधित है। इस प्रकार एकात्म मानववाद का विमर्श व्यक्ति के कल्याण को व्यापक सामाजिक एवं मानवीय कल्याण से जोड़ने का प्रयास करता है [6, 7]।

एकात्म मानववाद का यह समग्र दृष्टिकोण 'वसुधैव कुटुंबकम्' की विश्व-परिवार संबंधी अवधारणा के साथ महत्वपूर्ण वैचारिक संवाद की संभावना प्रस्तुत करता है। दोनों अवधारणाएँ अपने-अपने दार्शनिक संदर्भों में व्यक्ति को व्यापक संबंध-व्यवस्था का हिस्सा मानती हैं और केवल संकीर्ण स्वार्थ पर आधारित सामाजिक दृष्टिकोण के स्थान पर परस्पर संबद्धता एवं कल्याण की भावना को महत्व देती हैं। हालांकि, दोनों अवधारणाओं को समान मान लेना भी उचित नहीं होगा। वसुधैव कुटुंबकम् का आधार प्राचीन भारतीय दार्शनिक परंपरा में विकसित

विश्वबंधुत्व और सार्वभौमिक कल्याण की भावना है, जबकि एकात्म मानववाद आधुनिक सामाजिक, राजनीतिक और आर्थिक परिस्थितियों के संदर्भ में दीनदयाल उपाध्याय द्वारा प्रस्तुत एक विशिष्ट वैचारिक प्रतिपादन है। अतः इनके बीच संबंध स्थापित करने के लिए केवल समान शब्दावली या सामान्य मूल्यों की पहचान पर्याप्त नहीं है; इनके दार्शनिक आधार, मानव-दृष्टि, सामाजिक संरचना और व्यावहारिक निहितार्थों का तुलनात्मक एवं आलोचनात्मक अध्ययन आवश्यक है [8, 9]।

इस शोध की केंद्रीय समस्या इसी वैचारिक संबंध की प्रकृति को समझने से संबंधित है। प्रश्न यह है कि क्या एकात्म मानववाद की 'एकात्म' दृष्टि को वसुधैव कुटुंबकम की 'विश्व-परिवार' अवधारणा के आधुनिक विस्तार के रूप में देखा जा सकता है, अथवा दोनों के बीच केवल कुछ मूल्यगत समानताएँ ही विद्यमान हैं। इसके साथ यह भी विचारणीय है कि व्यक्ति और समष्टि के संबंध, सामाजिक समरसता, अंत्योदय, मानव-केंद्रित विकास, प्रकृति के साथ संतुलन तथा व्यापक लोककल्याण जैसे तत्व किस प्रकार दोनों विचार-परंपराओं के बीच संवाद स्थापित करते हैं [10]। इस संदर्भ में यह अध्ययन केवल एकात्म मानववाद की प्रशंसा अथवा उसकी आलोचना तक सीमित न रहकर उसके वैचारिक दावों और वसुधैव कुटुंबकम की मूल भावना के बीच संबंध का आलोचनात्मक परीक्षण करने का प्रयास करता है।

प्रस्तुत अध्ययन का प्रमुख उद्देश्य दीनदयाल उपाध्याय के एकात्म मानववाद की वैचारिक संरचना को समझते हुए उसमें निहित मानव, समाज और विश्व संबंधी दृष्टिकोण का विश्लेषण करना तथा उसे वसुधैव कुटुंबकम की भारतीय दार्शनिक अवधारणा के संदर्भ में परखना है। इसके अतिरिक्त, अध्ययन सामाजिक समरसता, अंत्योदय, समग्र विकास और मानव-प्रकृति संबंध जैसे प्रमुख आयामों के माध्यम से दोनों अवधारणाओं के अंतर्संबंध को स्पष्ट करने का प्रयास करता है। साथ ही, वैश्वीकरण, सामाजिक-आर्थिक असमानता और पर्यावरणीय संकट जैसी समकालीन चुनौतियों के संदर्भ में इन विचारों की संभावित प्रासंगिकता और सीमाओं पर भी विचार किया गया है। शोध की पद्धति मुख्यतः **गुणात्मक, वर्णनात्मक एवं विश्लेषणात्मक** है। अध्ययन में दीनदयाल उपाध्याय के मूल लेखन, भाषणों और एकात्म मानववाद संबंधी प्रतिपादनों को प्राथमिक स्रोत के रूप में तथा भारतीय दर्शन, वसुधैव कुटुंबकम और समकालीन सामाजिक-राजनीतिक चिंतन से संबंधित प्रमाणित अकादमिक साहित्य को द्वितीयक स्रोत के रूप में उपयोग किया जाएगा। शोध में वैचारिक विश्लेषण तथा तुलनात्मक पद्धति के माध्यम से दोनों अवधारणाओं के समानताओं और भिन्नताओं को समझने का प्रयास किया गया है। इस प्रकार अध्ययन का उद्देश्य किसी पूर्वनिर्धारित निष्कर्ष को स्थापित करना नहीं, बल्कि उपलब्ध वैचारिक एवं अकादमिक स्रोतों के आधार पर एकात्म मानववाद और वसुधैव कुटुंबकम के बीच संबंध की प्रकृति को अधिक स्पष्ट और आलोचनात्मक रूप से समझना है। प्रस्तुत शोध का महत्व इस तथ्य में निहित है कि यह एकात्म मानववाद और वसुधैव कुटुंबकम को पृथक-पृथक अवधारणाओं के रूप में देखने के बजाय उनके बीच संभावित दार्शनिक संवाद का अध्ययन करता है। इससे भारतीय राजनीतिक एवं सामाजिक चिंतन में व्यक्ति, समाज, राष्ट्र और विश्व के संबंधों को समझने के लिए एक व्यापक वैचारिक परिप्रेक्ष्य विकसित किया जा सकता है। साथ ही, समकालीन वैश्विक संदर्भ में मानव-केंद्रित विकास, सामाजिक समरसता, पर्यावरणीय संतुलन और विश्वबंधुत्व जैसे प्रश्नों पर भारतीय चिंतन की भूमिका को अधिक व्यवस्थित ढंग से समझने की संभावना भी उत्पन्न होती है [11-14]।

2. वसुधैव कुटुंबकम: भारतीय दार्शनिक परंपरा और वैचारिक आधार

‘वसुधैव कुटुंबकम्’ भारतीय चिंतन-परंपरा की उन अवधारणाओं में से एक है जो मनुष्य के सामाजिक अस्तित्व को स्थानीय अथवा संकीर्ण सीमाओं से आगे ले जाकर समस्त विश्व के साथ उसके संबंध को स्थापित करती है। सामान्यतः इसका अर्थ ‘समस्त पृथ्वी एक परिवार है’ के रूप में किया जाता है, किंतु इसका दार्शनिक आशय इससे कहीं अधिक व्यापक है। इसमें मनुष्य को ऐसी नैतिक एवं सामाजिक चेतना विकसित करने की अपेक्षा की जाती है जिसमें अपने और पराए, निकट और दूर तथा सीमित समूह और व्यापक मानव समुदाय के बीच के विभाजन को कम किया जा सके। इस दृष्टि से वसुधैव कुटुंबकम् केवल विश्वबंधुत्व का भावनात्मक आदर्श नहीं, बल्कि पारस्परिक उत्तरदायित्व, सह-अस्तित्व और व्यापक लोककल्याण की ओर उन्मुख एक वैचारिक दृष्टिकोण है [15-17]।

वसुधैव कुटुंबकम् की मूल अभिव्यक्ति महाउपनिषद् में प्राप्त होती है, जहाँ संकीर्ण दृष्टिकोण और व्यापक उदार दृष्टिकोण के बीच अंतर स्थापित किया गया है। प्रसिद्ध वाक्यांश—

“अयं निजः परो वेति गणना लघुचेतसाम्।

उदारचरितानां तु वसुधैव कुटुम्बकम्॥”

का आशय यह है कि ‘यह मेरा है और वह पराया है’ जैसी गणना सीमित चेतना का परिणाम है; उदार चरित्र वाले व्यक्तियों के लिए संपूर्ण पृथ्वी परिवार के समान है। यहाँ ‘परिवार’ की संकल्पना केवल रक्त-संबंधों तक सीमित नहीं है, बल्कि एक ऐसी नैतिक चेतना का संकेत करती है जिसमें दूसरे के अस्तित्व और कल्याण को भी अपने अस्तित्व एवं कल्याण से संबद्ध माना जाता है। इस प्रकार वसुधैव कुटुंबकम् की अवधारणा मनुष्य के नैतिक दायरे को विस्तृत करने का कार्य करती है।

भारतीय दार्शनिक परंपरा में व्यक्ति को पूर्णतः पृथक् और स्वायत्त इकाई के रूप में देखने की अपेक्षा उसे व्यापक अस्तित्व-संबंधों के भीतर समझने की प्रवृत्ति दिखाई देती है। उपनिषदों में आत्मा और ब्रह्म के संबंध, वैदिक साहित्य में ऋतु एवं सार्वभौमिक व्यवस्था की धारणा तथा भारतीय नैतिक चिंतन में लोकसंग्रह और सर्वजनहित की भावना इस व्यापक दृष्टि के विभिन्न आयामों को व्यक्त करती हैं। यद्यपि इन सभी अवधारणाओं को सीधे-सीधे ‘वसुधैव कुटुंबकम्’ का पर्याय नहीं माना जा सकता, फिर भी इनके भीतर व्यक्ति के अस्तित्व को व्यापक नैतिक और ब्रह्मांडीय व्यवस्था से जोड़ने की प्रवृत्ति दिखाई देती है। इसी व्यापक दार्शनिक पृष्ठभूमि में वसुधैव कुटुंबकम् को समझने पर इसका अर्थ केवल ‘विश्व एक परिवार है’ कहने से आगे बढ़कर विश्व के प्रति उत्तरदायी चेतना के रूप में सामने आता है।

वसुधैव कुटुंबकम् की एक महत्वपूर्ण विशेषता यह है कि यह सार्वभौमिकता को एकरूपता के साथ अनिवार्य रूप से नहीं जोड़ता। भारतीय सभ्यता में विविध धार्मिक, दार्शनिक, भाषायी और सांस्कृतिक परंपराओं का सह-अस्तित्व रहा है। इसलिए विश्व-परिवार की अवधारणा का एक संभावित अर्थ यह भी है कि विभिन्नताओं को समाप्त करने के स्थान पर उनके बीच सह-अस्तित्व और पारस्परिक सम्मान की संभावना खोजी जाए। इस दृष्टि से वसुधैव कुटुंबकम् विविधता के भीतर संबंध और एकता की खोज करता है। इसका लक्ष्य सभी व्यक्तियों या समुदायों को एक जैसा बनाना नहीं, बल्कि उनके बीच ऐसी नैतिक चेतना विकसित करना है जो भिन्नता के बावजूद परस्पर सम्मान और सहयोग को संभव बनाए [18-20]।

इस अवधारणा का संबंध केवल व्यक्ति-व्यक्ति के संबंधों से नहीं है, बल्कि मानव और व्यापक प्राकृतिक जगत के संबंध से भी जोड़ा जा सकता है। भारतीय चिंतन की अनेक धाराओं में प्रकृति को केवल संसाधन के रूप में देखने की अपेक्षा उसके साथ मनुष्य के सह-अस्तित्व पर बल मिलता है। पृथ्वी, जल, वायु, अग्नि और आकाश जैसे प्राकृतिक तत्वों के प्रति सम्मान की परंपरा मनुष्य और प्रकृति के बीच संबंध को केवल उपयोगिता के आधार पर परिभाषित नहीं करती। आधुनिक पर्यावरणीय संकट के संदर्भ में वसुधैव कुटुंबकम की व्यापक व्याख्या इसलिए महत्वपूर्ण हो सकती है क्योंकि विश्व-परिवार की भावना मनुष्य के हित को पृथक और निरपेक्ष मानने के स्थान पर व्यापक जीवन-जगत के साथ उसके संबंध पर विचार करने की संभावना प्रदान करती है।

वसुधैव कुटुंबकम का एक अन्य महत्वपूर्ण आयाम **लोककल्याण** है। भारतीय चिंतन में व्यक्तिगत उपलब्धि को व्यापक सामाजिक हित से जोड़ने की अनेक परंपराएँ रही हैं। 'सर्वे भवन्तु सुखिनः' जैसी प्रार्थनाएँ कल्याण को किसी विशेष वर्ग या समुदाय तक सीमित न रखकर व्यापक जनसमुदाय के लिए अभिलक्षित करती हैं। इस प्रकार वसुधैव कुटुंबकम और लोककल्याण की भावना के बीच एक वैचारिक संबंध स्थापित किया जा सकता है। यहाँ कल्याण का अर्थ केवल भौतिक समृद्धि नहीं है, बल्कि ऐसी सामाजिक व्यवस्था से है जिसमें मनुष्य की गरिमा, सुरक्षा, सह-अस्तित्व और विकास की संभावनाओं को महत्व दिया जाए [21-23]।

हालाँकि, वसुधैव कुटुंबकम की अवधारणा की आधुनिक व्याख्या करते समय ऐतिहासिक और समकालीन संदर्भों के बीच अंतर को ध्यान में रखना आवश्यक है। प्राचीन भारतीय ग्रंथों में प्रयुक्त 'विश्व', 'कुटुंब' अथवा 'लोक' जैसी संकल्पनाओं को आधुनिक राष्ट्र-राज्य, वैश्वीकरण और अंतरराष्ट्रीय संस्थाओं की वर्तमान संरचनाओं के साथ सीधे समान नहीं किया जा सकता। आधुनिक संदर्भ में इस अवधारणा का प्रयोग प्रायः वैश्विक सहयोग, शांति, मानवीय गरिमा और सतत विकास के विमर्श में किया जाता है, किंतु ऐसी व्याख्याओं को मूल दार्शनिक संदर्भों से जोड़कर और उनके बीच के ऐतिहासिक अंतर को स्वीकार करते हुए प्रस्तुत करना अधिक अकादमिक रूप से उपयुक्त होगा [24-25]।

इस प्रकार वसुधैव कुटुंबकम को भारतीय चिंतन में एक ऐसी व्यापक अवधारणा के रूप में समझा जा सकता है जो 'स्व' की सीमाओं का विस्तार करते हुए 'अन्य' के प्रति उत्तरदायित्व की भावना विकसित करती है। इसमें व्यक्ति, समाज और व्यापक मानव समुदाय के बीच संबंध को प्रतिस्पर्धा अथवा पृथक्ता के स्थान पर पारस्परिकता के आधार पर समझने की संभावना निहित है। यही विशेषता आगे चलकर दीनदयाल उपाध्याय के एकात्म मानववाद के साथ इसके वैचारिक संबंध की पड़ताल के लिए आधार प्रदान करती है। एकात्म मानववाद में व्यक्ति और समष्टि के बीच जिस अंतर्संबंध की चर्चा की जाती है, उसका तुलनात्मक अध्ययन यह समझने में सहायक हो सकता है कि प्राचीन भारतीय विश्वबंधुत्व की अवधारणा को आधुनिक सामाजिक एवं राजनीतिक चिंतन के संदर्भ में किस प्रकार पुनर्परिभाषित किया गया।

3. दीनदयाल उपाध्याय का एकात्म मानववाद: मूल अवधारणा

दीनदयाल उपाध्याय का एकात्म मानववाद आधुनिक भारत के सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक चिंतन में भारतीय दार्शनिक दृष्टि को आधार बनाकर विकसित किया गया एक महत्वपूर्ण वैचारिक प्रतिपादन है। इसका विकास उस ऐतिहासिक संदर्भ में हुआ जब स्वतंत्र भारत के सामने ऐसी विकास-दृष्टि निर्धारित करने की चुनौती थी जो देश की सामाजिक-सांस्कृतिक परिस्थितियों के अनुरूप हो। उपाध्याय का विचार था कि किसी समाज की

राजनीतिक एवं आर्थिक व्यवस्था को केवल बाहरी वैचारिक प्रतिमानों के आधार पर निर्धारित करने के बजाय उसकी अपनी ऐतिहासिक चेतना, सांस्कृतिक परंपरा और मानव-दृष्टि को भी ध्यान में रखा जाना चाहिए। इसी संदर्भ में उन्होंने एक ऐसी समग्र दृष्टि प्रस्तुत करने का प्रयास किया जिसमें व्यक्ति को उसके सामाजिक, सांस्कृतिक, नैतिक और आध्यात्मिक संदर्भों से अलग करके नहीं देखा जाता।

एकात्म मानववाद का मूल आधार 'एकात्मता' की अवधारणा है। यहाँ एकात्मता का आशय सभी व्यक्तियों की समानता अथवा सामाजिक संरचनाओं की एकरूपता से नहीं है, बल्कि विभिन्न इकाइयों के बीच अंतर्संबंध और पारस्परिक निर्भरता से है। उपाध्याय के चिंतन में व्यक्ति और समाज परस्पर विरोधी इकाइयाँ नहीं हैं। व्यक्ति समाज से अपनी पहचान, संस्कार और जीवन की अनेक आवश्यकताएँ प्राप्त करता है, जबकि समाज का अस्तित्व भी व्यक्तियों के सहयोग और सहभागिता पर निर्भर करता है। इस प्रकार व्यक्ति के हित और समाज के हित के बीच ऐसा संतुलन स्थापित करने का प्रयास किया जाता है जिसमें किसी एक को दूसरे के पूर्ण निषेध के आधार पर परिभाषित न किया जाए।

एकात्म मानववाद की सबसे महत्वपूर्ण विशेषताओं में से एक इसकी **समग्र मानव-दृष्टि** है। उपाध्याय ने मनुष्य को केवल भौतिक आवश्यकताओं से संचालित प्राणी मानने के बजाय उसके शरीर, मन, बुद्धि और आत्मा के समन्वित स्वरूप पर बल दिया। मनुष्य के जीवन में भोजन, आवास और आर्थिक सुरक्षा जैसी भौतिक आवश्यकताओं का महत्व है, किंतु मानव जीवन को केवल इन्हीं आवश्यकताओं तक सीमित नहीं किया जा सकता। भावनात्मक संतुलन, बौद्धिक विकास, नैतिक चेतना और आध्यात्मिक आकांक्षा भी उसके व्यक्तित्व के महत्वपूर्ण पक्ष हैं। अतः ऐसी विकास-दृष्टि जो मनुष्य के केवल एक पक्ष को महत्व देती है, एकात्म मानववाद की दृष्टि में मानव जीवन की पूर्णता को पर्याप्त रूप से अभिव्यक्त नहीं कर सकती।

इस संदर्भ में **धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष** की भारतीय अवधारणा भी महत्वपूर्ण हो जाती है। एकात्म मानववाद में इन पुरुषार्थों को मानव जीवन की विभिन्न आवश्यकताओं और उद्देश्यों के समन्वित ढाँचे के रूप में देखा जाता है। अर्थ और काम मानव जीवन की भौतिक एवं सामाजिक आवश्यकताओं से जुड़े हैं, जबकि धर्म उनके उचित नियमन तथा जीवन में संतुलन स्थापित करने की भूमिका निभाता है। मोक्ष मानव जीवन के उच्चतर आध्यात्मिक आयाम की ओर संकेत करता है। इस प्रकार मानव जीवन को केवल आर्थिक समृद्धि के आधार पर परिभाषित करने के स्थान पर एकात्म मानववाद जीवन के विभिन्न उद्देश्यों के बीच संतुलन की आवश्यकता पर बल देता है।

एकात्म मानववाद की सामाजिक दृष्टि को समझने के लिए व्यक्ति और **समष्टि** के संबंध को समझना आवश्यक है। उपाध्याय के चिंतन में समाज व्यक्तियों का मात्र यांत्रिक समूह नहीं है। समाज की अपनी सांस्कृतिक चेतना, परंपराएँ, संस्थाएँ और सामूहिक जीवन-मूल्य होते हैं। व्यक्ति का विकास समाज से पृथक होकर संभव नहीं माना जाता और समाज का विकास भी व्यक्ति की गरिमा तथा क्षमता के विकास से जुड़ा हुआ है। इस दृष्टि में परिवार सामाजिक जीवन की एक महत्वपूर्ण इकाई है, जिसके माध्यम से व्यक्ति सामाजिक उत्तरदायित्व, सहयोग और सामुदायिक चेतना का अनुभव करता है। परिवार से आगे समाज और राष्ट्र की संस्थाएँ व्यक्ति के संबंधों को व्यापक बनाती हैं।

यहाँ राष्ट्र की अवधारणा भी केवल राजनीतिक अथवा भौगोलिक इकाई तक सीमित नहीं रहती। एकात्म मानववाद के संदर्भ में राष्ट्र को साझा सांस्कृतिक चेतना, ऐतिहासिक अनुभव और सामूहिक जीवन-मूल्यों से संबद्ध करके देखा जाता है। इस प्रकार राष्ट्र का संबंध केवल राज्य की संस्थाओं से नहीं, बल्कि समाज की व्यापक सांस्कृतिक संरचना से भी स्थापित किया जाता है। यह दृष्टिकोण राज्य और राष्ट्र के बीच अंतर को समझने की आवश्यकता उत्पन्न करता है। राज्य एक राजनीतिक संस्था के रूप में कार्य करता है, जबकि राष्ट्र की अवधारणा को व्यापक सांस्कृतिक एवं सामाजिक संदर्भ में समझा जाता है।

एकात्म मानववाद का आर्थिक पक्ष भी उसकी समग्र मानव-दृष्टि से जुड़ा हुआ है। उपाध्याय के चिंतन में अर्थव्यवस्था का उद्देश्य केवल अधिकतम उत्पादन अथवा उपभोग की वृद्धि नहीं है। आर्थिक व्यवस्था का मूल्यांकन इस आधार पर भी किया जाना चाहिए कि वह समाज के विभिन्न वर्गों की आवश्यकताओं को किस सीमा तक पूरा करती है और व्यक्ति को गरिमापूर्ण जीवन के अवसर कितने उपलब्ध कराती है। इस संदर्भ में **अंत्योदय** की भावना विशेष महत्व प्राप्त करती है, जिसमें समाज के अंतिम और अपेक्षाकृत वंचित व्यक्ति के कल्याण को विकास के विमर्श का महत्वपूर्ण मानदंड माना जाता है। इस दृष्टिकोण से विकास का प्रश्न केवल राष्ट्रीय आय अथवा उत्पादन की वृद्धि का प्रश्न न रहकर सामाजिक न्याय और मानवीय गरिमा से जुड़ जाता है।

एकात्म मानववाद में विकेंद्रीकरण, स्वावलंबन और स्थानीय सामाजिक-आर्थिक संरचनाओं का महत्व भी इसी व्यापक दृष्टिकोण के अंतर्गत समझा जा सकता है। आर्थिक व्यवस्था यदि अत्यधिक केंद्रीकृत हो जाए और व्यक्ति तथा स्थानीय समुदाय निर्णय-प्रक्रिया से दूर हो जाएँ, तो आर्थिक विकास और सामाजिक जीवन के बीच दूरी बढ़ सकती है। इसके विपरीत, स्थानीय आवश्यकताओं, सामुदायिक सहभागिता और स्वावलंबन पर आधारित व्यवस्था व्यक्ति को केवल उपभोक्ता के रूप में नहीं बल्कि सक्रिय सामाजिक इकाई के रूप में देखने की संभावना प्रस्तुत करती है। इस दृष्टिकोण में अर्थव्यवस्था का सामाजिक उद्देश्य और मानवीय पक्ष केंद्रीय महत्व ग्रहण करता है।

एकात्म मानववाद की एक अन्य महत्वपूर्ण विशेषता **समरसता** की अवधारणा है। सामाजिक जीवन में विभिन्न वर्गों, समूहों और समुदायों के बीच संबंधों को केवल संघर्ष के दृष्टिकोण से देखने के बजाय परस्पर सहयोग और एकात्मता की संभावना पर बल दिया जाता है। इसका उद्देश्य सामाजिक विविधताओं को समाप्त करना नहीं, बल्कि उनके बीच संतुलित संबंध स्थापित करना है। इस प्रकार सामाजिक समरसता का विचार सामाजिक संगठन को प्रतिस्पर्धी हितों के संघर्ष से आगे ले जाकर साझा उत्तरदायित्व और व्यापक कल्याण की दिशा में देखने का प्रयास करता है।

मनुष्य और प्रकृति के संबंध के संदर्भ में भी एकात्म मानववाद की समग्र दृष्टि महत्वपूर्ण है। यदि मनुष्य को प्रकृति से पूर्णतः पृथक् मानकर प्राकृतिक संसाधनों को केवल उपभोग की वस्तु माना जाए, तो विकास का मॉडल दीर्घकालिक असंतुलन उत्पन्न कर सकता है। एकात्म दृष्टि मनुष्य को व्यापक जीवन-व्यवस्था का हिस्सा मानने की संभावना प्रस्तुत करती है। इस आधार पर प्रकृति के साथ संतुलन, संसाधनों का विवेकपूर्ण उपयोग और विकास की दीर्घकालिक स्थिरता जैसे प्रश्नों को मानव कल्याण के साथ जोड़कर देखा जा सकता है।

इस प्रकार एकात्म मानववाद की मूल संरचना में व्यक्ति, परिवार, समाज, राष्ट्र और व्यापक मानव समुदाय के बीच संबंधों को एक समग्र क्रम में समझने का प्रयास दिखाई देता है। इसकी मानव-दृष्टि भौतिक, मानसिक,

बौद्धिक और आध्यात्मिक आयामों के समन्वय पर आधारित है, जबकि इसकी सामाजिक दृष्टि व्यक्ति और समष्टि के बीच परस्पर निर्भरता को महत्व देती है। इसी व्यापक संरचना के कारण एकात्म मानववाद का संबंध केवल राजनीतिक विचारधारा से नहीं, बल्कि मानव जीवन, सामाजिक संगठन, आर्थिक व्यवस्था और व्यापक लोककल्याण से जुड़े प्रश्नों से भी स्थापित होता है। यही आधार अगले खंड में यह विश्लेषण करने के लिए महत्वपूर्ण है कि एकात्म मानववाद की 'एकात्म' दृष्टि और वसुधैव कुटुंबकम की 'विश्व-परिवार' अवधारणा के बीच किस प्रकार का वैचारिक संबंध निर्मित होता है।

4. एकात्म मानववाद और वसुधैव कुटुंबकम: वैचारिक अंतर्संबंध

दीनदयाल उपाध्याय के एकात्म मानववाद और भारतीय दार्शनिक परंपरा की वसुधैव कुटुंबकम की अवधारणा का तुलनात्मक अध्ययन भारतीय चिंतन में व्यक्ति, समाज और विश्व के संबंधों को समझने का एक महत्वपूर्ण आधार प्रदान करता है। दोनों अवधारणाएँ अलग-अलग ऐतिहासिक और वैचारिक संदर्भों में विकसित हुई हैं, इसलिए उन्हें पूर्णतः समान मानना उचित नहीं होगा। वसुधैव कुटुंबकम प्राचीन भारतीय दार्शनिक परंपरा से संबद्ध एक व्यापक विश्वबंधुत्व की अवधारणा है, जबकि एकात्म मानववाद आधुनिक सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक परिस्थितियों के संदर्भ में दीनदयाल उपाध्याय द्वारा प्रस्तुत वैचारिक प्रतिपादन है। फिर भी दोनों में ऐसी आधारभूत समानताएँ दिखाई देती हैं जो व्यक्ति और समष्टि के संबंध, सामाजिक समरसता, व्यापक कल्याण तथा मानव जीवन की परस्पर संबद्धता के अध्ययन के लिए महत्वपूर्ण हैं।

एकात्म मानववाद में 'एकात्म' की अवधारणा व्यक्ति को सामाजिक एवं व्यापक जीवन-व्यवस्था से जोड़ती है। व्यक्ति को पूर्णतः पृथक और आत्मनिर्भर इकाई मानने के स्थान पर उसके अस्तित्व को परिवार, समाज और राष्ट्र के साथ अंतर्संबंधित माना जाता है। वसुधैव कुटुंबकम इसी संबंध को एक और व्यापक स्तर तक विस्तारित करता है, जहाँ परिवार की सीमाएँ स्थानीय अथवा सामाजिक समुदाय तक सीमित न रहकर समस्त पृथ्वी तक पहुँचती हैं। इस दृष्टि से दोनों अवधारणाओं के बीच एक वैचारिक क्रम की पहचान की जा सकती है—व्यक्ति से परिवार, परिवार से समाज, समाज से राष्ट्र और व्यापक स्तर पर मानवता तक। हालांकि, यह ध्यान रखना आवश्यक है कि ऐसा क्रम एक व्याख्यात्मक ढाँचा है; इसे दोनों अवधारणाओं की ऐतिहासिक उत्पत्ति या मूल अर्थ की पूर्ण समानता के रूप में नहीं देखा जाना चाहिए।

व्यक्ति और समष्टि का संबंध

एकात्म मानववाद की केंद्रीय विशेषता व्यक्ति और समष्टि के बीच संबंध को विरोध के बजाय पूरकता के आधार पर समझना है। व्यक्ति समाज से अलग होकर अपनी सामाजिक पहचान और जीवन-मूल्यों का पूर्ण विकास नहीं कर सकता। दूसरी ओर, समाज भी व्यक्तियों की सक्रिय सहभागिता के बिना अपनी संस्थाओं और परंपराओं को जीवित नहीं रख सकता। इस प्रकार व्यक्ति और समाज का संबंध पारस्परिक निर्भरता पर आधारित है।

वसुधैव कुटुंबकम इस संबंध को व्यापक मानवीय स्तर पर प्रस्तुत करता है। 'कुटुंब' की संकल्पना में प्रत्येक सदस्य का कल्याण अन्य सदस्यों के कल्याण से संबद्ध होता है। यदि इस अवधारणा को व्यापक सामाजिक दर्शन के रूप में समझा जाए, तो इसमें ऐसी नैतिक चेतना की अपेक्षा निहित है जिसमें व्यक्ति अपने हित को व्यापक समुदाय के हित से पूरी तरह पृथक न माने। इस संदर्भ में एकात्म मानववाद का व्यक्ति-समष्टि संबंध और वसुधैव कुटुंबकम का विश्व-परिवार संबंध एक-दूसरे के साथ सार्थक वैचारिक संवाद स्थापित करते हैं।

फिर भी दोनों के बीच एक महत्वपूर्ण अंतर है। एकात्म मानववाद में व्यक्ति और समष्टि का संबंध भारतीय सामाजिक एवं सांस्कृतिक संरचना के संदर्भ में विकसित किया गया है, जबकि वसुधैव कुटुंबकम का मूल कथन किसी विशिष्ट आधुनिक राजनीतिक या आर्थिक संस्थागत व्यवस्था का प्रत्यक्ष मॉडल प्रस्तुत नहीं करता। अतः वसुधैव कुटुंबकम को आधुनिक शासन या आर्थिक नीति का पूर्ण विकल्प मानना उसके मूल स्वरूप का अनावश्यक विस्तार होगा।

सामाजिक समरसता और विश्वबंधुत्व

एकात्म मानववाद में सामाजिक जीवन को केवल हितों के संघर्ष के रूप में देखने के स्थान पर समरसता और सहयोग की संभावना पर बल दिया जाता है। सामाजिक विविधताओं को स्वीकार करते हुए उनके बीच संतुलन और सामंजस्य स्थापित करना इसकी सामाजिक दृष्टि का महत्वपूर्ण पक्ष है। इस दृष्टिकोण में समाज का उद्देश्य केवल व्यक्तिगत अधिकारों की रक्षा करना नहीं, बल्कि साझा उत्तरदायित्व और सामाजिक कल्याण को भी सुनिश्चित करना है।

वसुधैव कुटुंबकम इसी भावना को वैश्विक स्तर पर विस्तारित करने की संभावना प्रस्तुत करता है। यदि समस्त मानव समुदाय को एक परिवार माना जाता है, तो विभिन्न राष्ट्रों, संस्कृतियों और समुदायों के बीच संबंधों को केवल प्रतिस्पर्धा या संघर्ष की दृष्टि से नहीं देखा जा सकता। सहयोग, पारस्परिक सम्मान और सह-अस्तित्व इस दृष्टिकोण के स्वाभाविक नैतिक आधार बन सकते हैं।

हालाँकि, विश्वबंधुत्व की भावना को व्यावहारिक अंतरराष्ट्रीय संबंधों में लागू करना जटिल है। आधुनिक विश्व में राष्ट्रों के राजनीतिक और आर्थिक हित भिन्न होते हैं तथा संसाधनों, सुरक्षा और रणनीतिक प्राथमिकताओं को लेकर प्रतिस्पर्धा भी मौजूद रहती है। इसलिए वसुधैव कुटुंबकम को एक नैतिक आदर्श के रूप में समझना और उसे व्यावहारिक अंतरराष्ट्रीय नीति में रूपांतरित करना दो अलग-अलग प्रश्न हैं। इसी प्रकार एकात्म मानववाद के सामाजिक समरसता संबंधी विचारों का वास्तविक सामाजिक संस्थाओं में कार्यान्वयन भी अलग-अलग ऐतिहासिक परिस्थितियों पर निर्भर करता है।

राष्ट्र से विश्व तक : संबंध की व्यापकता

एकात्म मानववाद में राष्ट्र की अवधारणा को केवल राज्य की राजनीतिक सीमाओं के संदर्भ में नहीं देखा जाता, बल्कि सांस्कृतिक चेतना और साझा ऐतिहासिक अनुभव के संदर्भ में भी समझा जाता है। राष्ट्र व्यक्ति और समाज के बीच संबंध को व्यापक स्तर पर संगठित करने वाली इकाई के रूप में सामने आता है। इस दृष्टिकोण में राष्ट्रीय जीवन का उद्देश्य केवल राजनीतिक शक्ति प्राप्त करना नहीं, बल्कि समाज की सामूहिक चेतना और सांस्कृतिक निरंतरता को बनाए रखना भी है।

वसुधैव कुटुंबकम का दायरा राष्ट्र की सीमा से आगे जाता है। इसका मूल नैतिक आग्रह यह है कि मनुष्य की पहचान केवल अपने स्थानीय समुदाय अथवा राष्ट्र तक सीमित न हो। इस प्रकार दोनों अवधारणाओं के बीच एक महत्वपूर्ण प्रश्न उभरता है—राष्ट्रीय पहचान और सार्वभौमिक मानव-एकता के बीच संतुलन किस प्रकार स्थापित किया जाए।

एकात्म मानववाद के संदर्भ में राष्ट्र और विश्व को परस्पर विरोधी अवधारणाएँ मानना आवश्यक नहीं है। यदि राष्ट्र को मानव समाज की एक विशिष्ट सांस्कृतिक एवं सामाजिक इकाई माना जाए और विश्व को व्यापक मानव समुदाय के रूप में देखा जाए, तो राष्ट्रीय जीवन और विश्वबंधुत्व के बीच संभावित संबंध स्थापित किया जा सकता है। किंतु यह संबंध तभी सार्थक होगा जब राष्ट्रीय हित को सार्वभौमिक मानवीय हित से पूर्णतः पृथक या उसके विरोध में न रखा जाए। यही वह बिंदु है जहाँ वसुधैव कुटुंबकम की अवधारणा एक व्यापक नैतिक संदर्भ प्रदान करती है।

विविधता और एकात्मता

भारतीय समाज की विशेषता उसकी बहुलता और विविधता रही है। भाषा, क्षेत्र, परंपरा, दर्शन और सामाजिक प्रथाओं में व्यापक भिन्नताएँ दिखाई देती हैं। ऐसी परिस्थितियों में एकात्मता का अर्थ समानता या एकरूपता नहीं हो सकता। एकात्म मानववाद की दृष्टि से एकात्मता को विभिन्न इकाइयों के बीच संबंध और समन्वय के रूप में समझना अधिक उपयुक्त है।

वसुधैव कुटुंबकम भी विश्व को एक परिवार मानते हुए विविधताओं के अस्तित्व को समाप्त करने का आग्रह नहीं करता। परिवार में सदस्यों के बीच समानता के साथ-साथ व्यक्तिगत भिन्नताएँ भी बनी रहती हैं। इसी प्रकार विश्व-परिवार की अवधारणा का अर्थ विभिन्न संस्कृतियों और समाजों का विलय नहीं, बल्कि उनके बीच परस्पर सम्मान और सह-अस्तित्व की संभावना के रूप में समझा जा सकता है।

इस दृष्टि से 'एकता' और 'एकरूपता' के बीच अंतर अत्यंत महत्वपूर्ण है। एकात्मता का उद्देश्य विविधताओं को समाप्त करना नहीं, बल्कि उनके बीच संबंधों को ऐसी दिशा देना है जिसमें संघर्ष के स्थान पर सहयोग और विभाजन के स्थान पर समन्वय की संभावना विकसित हो।

अंत्योदय और सार्वभौमिक कल्याण

एकात्म मानववाद में अंत्योदय का विचार सामाजिक एवं आर्थिक चिंतन को मानवीय आधार प्रदान करता है। विकास की सफलता केवल समग्र उत्पादन अथवा आर्थिक वृद्धि से निर्धारित नहीं होती, बल्कि इस बात से भी संबंधित है कि समाज के सबसे कमजोर और अंतिम व्यक्ति तक विकास के अवसर और संसाधन किस सीमा तक पहुँचते हैं। इस दृष्टिकोण में आर्थिक व्यवस्था का अंतिम उद्देश्य मनुष्य की गरिमा और जीवन की आवश्यकताओं की पूर्ति से जुड़ा है।

वसुधैव कुटुंबकम की अवधारणा में भी कल्याण को संकीर्ण समूह तक सीमित न रखकर व्यापक मानव समुदाय तक विस्तारित करने की भावना निहित है। दोनों अवधारणाओं के बीच यह एक महत्वपूर्ण वैचारिक सेतु निर्मित करता है। एकात्म मानववाद जहाँ सामाजिक व्यवस्था के भीतर वंचित व्यक्ति के कल्याण पर बल देता है, वहीं वसुधैव कुटुंबकम कल्याण के नैतिक दायरे को व्यापक मानव समुदाय तक ले जाने की संभावना प्रस्तुत करता है। इस संबंध को आधुनिक संदर्भ में मानव गरिमा, सामाजिक न्याय और अवसरों की समान उपलब्धता जैसे प्रश्नों से जोड़ा जा सकता है। हालांकि, यह भी आवश्यक है कि इन अवधारणाओं को आधुनिक कल्याणकारी राज्य या सामाजिक नीति के साथ सीधे समान न माना जाए; बल्कि यह देखा जाए कि उनके मूल मूल्य आधुनिक नीतिगत विमर्श के साथ किस प्रकार संवाद कर सकते हैं।

मानव और प्रकृति का संबंध

एकात्म मानववाद की समग्र दृष्टि मनुष्य को व्यापक जीवन-व्यवस्था से जोड़ती है। इस आधार पर मनुष्य और प्रकृति के संबंध को केवल आर्थिक उपयोगिता के आधार पर परिभाषित करने की सीमाओं पर विचार किया जा सकता है। यदि प्रकृति को केवल संसाधन माना जाए, तो अल्पकालिक आर्थिक लाभ दीर्घकालिक पर्यावरणीय असंतुलन का कारण बन सकते हैं।

वसुधैव कुटुंबकम् की व्यापक व्याख्या में भी पृथ्वी को साझा जीवन-स्थान के रूप में देखने की संभावना निहित है। आधुनिक पर्यावरणीय संकट के संदर्भ में यह दृष्टिकोण मानव-केंद्रित विकास की सीमाओं पर पुनर्विचार करने का आधार प्रदान कर सकता है। जलवायु परिवर्तन, जैव विविधता का हास और प्राकृतिक संसाधनों के अत्यधिक दोहन जैसी समस्याएँ किसी एक व्यक्ति अथवा राष्ट्र तक सीमित नहीं रहतीं। इनके समाधान के लिए सामूहिक उत्तरदायित्व आवश्यक है। इस प्रकार एकात्म मानववाद की समग्रता और वसुधैव कुटुंबकम् की विश्व-परिवार भावना को पर्यावरणीय उत्तरदायित्व के संदर्भ में भी जोड़ा जा सकता है। फिर भी यह संबंध मुख्यतः व्याख्यात्मक है और इसे स्थापित करने के लिए पर्यावरणीय चिंतन तथा उपाध्याय के मूल लेखन के बीच अधिक विशिष्ट तुलनात्मक अध्ययन की आवश्यकता होगी।

वैचारिक साम्य और आवश्यक भिन्नताएँ

दोनों अवधारणाओं के बीच व्यक्ति और व्यापक समुदाय की अंतर्संबद्धता, सामाजिक समरसता, व्यापक कल्याण, सहयोग और सह-अस्तित्व जैसे मूल्यगत साम्य स्पष्ट किए जा सकते हैं। किंतु इन साम्यताओं के आधार पर दोनों को पूर्णतः समान मानना उचित नहीं होगा। वसुधैव कुटुंबकम् मूलतः एक प्राचीन दार्शनिक-नैतिक अवधारणा है, जबकि एकात्म मानववाद आधुनिक युग में सामाजिक, राजनीतिक और आर्थिक व्यवस्था के प्रश्नों पर केंद्रित एक व्यवस्थित वैचारिक प्रतिपादन है। एकात्म मानववाद आधुनिक विचारधाराओं के संदर्भ में मनुष्य, समाज, अर्थव्यवस्था और राष्ट्र की संरचना पर विचार करता है। इसके विपरीत वसुधैव कुटुंबकम् अपने मूल रूप में किसी विशिष्ट आर्थिक प्रणाली अथवा शासन-व्यवस्था का विस्तृत कार्यक्रम प्रस्तुत नहीं करता। इसलिए दोनों के बीच संबंध को 'समानता' की अपेक्षा 'वैचारिक संवाद' के रूप में समझना अधिक उपयुक्त है। इस प्रकार एकात्म मानववाद में निहित एकात्म दृष्टि और वसुधैव कुटुंबकम् की विश्व-परिवार भावना के बीच एक संभावित वैचारिक निरंतरता दिखाई देती है, किंतु यह निरंतरता ऐतिहासिक समानता का दावा नहीं करती। एकात्म मानववाद को आधुनिक संदर्भ में भारतीय समग्र मानव-दृष्टि की एक विशिष्ट व्याख्या के रूप में देखा जा सकता है, जबकि वसुधैव कुटुंबकम् उस व्यापक दार्शनिक परंपरा का प्रतिनिधित्व करता है जो मानव संबंधों की सीमाओं को संपूर्ण विश्व तक विस्तारित करती है। दोनों का तुलनात्मक अध्ययन इस बात को समझने में सहायक है कि भारतीय चिंतन में व्यक्ति, समाज, राष्ट्र और विश्व को परस्पर संबद्ध इकाइयों के रूप में किस प्रकार देखा गया है।

5. एकात्म मानववाद का सामाजिक, आर्थिक और मानवीय आयाम

दीनदयाल उपाध्याय का एकात्म मानववाद केवल मनुष्य के दार्शनिक स्वरूप की व्याख्या तक सीमित नहीं है, बल्कि सामाजिक और आर्थिक व्यवस्था के उद्देश्यों तथा उनके मानवीय आधार पर भी विचार करता है। इसकी मूल मान्यता यह है कि राजनीतिक, सामाजिक और आर्थिक संस्थाओं का मूल्यांकन इस आधार पर किया जाना

चाहिए कि वे मनुष्य के समग्र विकास और समाज के व्यापक कल्याण में किस प्रकार योगदान करती हैं। इस दृष्टि में अर्थव्यवस्था साध्य नहीं, बल्कि मानवीय जीवन को व्यवस्थित और गरिमापूर्ण बनाने का एक माध्यम है। यही कारण है कि एकात्म मानववाद के सामाजिक और आर्थिक आयामों को वसुधैव कुटुंबकम की व्यापक लोककल्याणकारी भावना के संदर्भ में पढ़ना उपयोगी हो जाता है।

सामाजिक समरसता और मानवीय गरिमा

एकात्म मानववाद की सामाजिक दृष्टि व्यक्ति को समाज से अलग करके नहीं देखती। व्यक्ति की आवश्यकताओं, अधिकारों और दायित्वों का संबंध उस सामाजिक व्यवस्था से है जिसमें वह जीवन व्यतीत करता है। इसलिए सामाजिक विकास का प्रश्न केवल संस्थागत परिवर्तन का प्रश्न नहीं है, बल्कि सामाजिक संबंधों, उत्तरदायित्वों और पारस्परिक विश्वास की प्रकृति से भी जुड़ा है। सामाजिक समरसता इस दृष्टिकोण का महत्वपूर्ण तत्व है। समरसता का अर्थ सामाजिक भिन्नताओं का पूर्ण उन्मूलन नहीं, बल्कि विविध सामाजिक समूहों के बीच सम्मान, सहयोग और सहभागिता की ऐसी स्थिति से है जिसमें सामाजिक विभाजन स्थायी संघर्ष का आधार न बनें। इस संदर्भ में व्यक्ति की गरिमा और समाज की एकता को परस्पर पूरक माना जाता है। किसी व्यक्ति या समूह की सामाजिक स्थिति यदि उसकी मानवीय गरिमा को बाधित करती है, तो केवल आर्थिक विकास उस समस्या का पूर्ण समाधान नहीं माना जा सकता। वसुधैव कुटुंबकम की अवधारणा इस सामाजिक दृष्टि को व्यापक नैतिक संदर्भ प्रदान कर सकती है। यदि समस्त मानव समुदाय को परिवार के रूप में देखा जाए, तो दूसरे व्यक्ति के सम्मान और कल्याण को केवल बाहरी दायित्व न मानकर व्यापक मानवीय संबंध का हिस्सा समझा जा सकता है। इस अर्थ में सामाजिक समरसता और विश्वबंधुत्व के बीच एक वैचारिक संबंध स्थापित होता है।

अंत्योदय और विकास की मानवीय कसौटी

एकात्म मानववाद के आर्थिक चिंतन में अंत्योदय विशेष महत्व रखता है। अंत्योदय का मूल आशय समाज के अंतिम अथवा सबसे वंचित व्यक्ति के जीवन में सुधार को विकास की प्रक्रिया का महत्वपूर्ण उद्देश्य मानने से है। यह दृष्टिकोण विकास को केवल समग्र आर्थिक आँकड़ों के माध्यम से मापने की सीमा की ओर संकेत करता है। यदि किसी अर्थव्यवस्था में उत्पादन और आय में वृद्धि होती है, लेकिन उसका लाभ समाज के कमजोर वर्गों तक पर्याप्त रूप से नहीं पहुँचता, तो विकास की सामाजिक सार्थकता पर प्रश्न उठाया जा सकता है। अंत्योदय इस प्रश्न को केंद्र में लाता है कि आर्थिक व्यवस्था किस सीमा तक उन लोगों की आवश्यकताओं को संबोधित करती है जिनके पास संसाधनों, अवसरों और निर्णय-प्रक्रिया तक अपेक्षाकृत कम पहुँच है। यह दृष्टिकोण वसुधैव कुटुंबकम के व्यापक कल्याण के आदर्श के साथ वैचारिक रूप से जुड़ सकता है। वसुधैव कुटुंबकम जहाँ कल्याण के दायरे को व्यापक मानव समुदाय तक विस्तारित करता है, वहीं अंत्योदय सामाजिक व्यवस्था के भीतर सबसे कमजोर व्यक्ति की ओर विशेष ध्यान आकर्षित करता है। इस प्रकार एक अवधारणा कल्याण की व्यापक सीमा निर्धारित करती है और दूसरी उस कल्याण की सामाजिक प्राथमिकता को रेखांकित करती है।

आर्थिक विकास की समग्र दृष्टि

एकात्म मानववाद आर्थिक विकास को मानव जीवन के अन्य आयामों से पृथक करके नहीं देखता। अर्थव्यवस्था का उद्देश्य केवल अधिक उत्पादन और अधिक उपभोग की क्षमता उत्पन्न करना नहीं, बल्कि ऐसी परिस्थितियाँ

निर्मित करना भी है जिनमें व्यक्ति अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति के साथ सामाजिक और नैतिक जीवन का विकास कर सके। इस संदर्भ में उपाध्याय की दृष्टि आधुनिक आर्थिक चिंतन की उन प्रवृत्तियों पर प्रश्न उठाती है जिनमें मनुष्य को मुख्यतः उत्पादक और उपभोक्ता के रूप में परिभाषित किया जाता है। यदि आर्थिक व्यवस्था का केंद्र केवल उपभोग-वृद्धि बन जाए, तो सामाजिक संबंध, पर्यावरणीय संतुलन और मानवीय आवश्यकताओं के गुणात्मक पक्ष अपेक्षाकृत गौण हो सकते हैं। एकात्म मानववाद इन आयामों के बीच संतुलन की आवश्यकता पर बल देता है। इसका अर्थ आर्थिक प्रगति का निषेध नहीं है। इसके बजाय आर्थिक प्रगति को मानव जीवन की व्यापक आवश्यकताओं के साथ जोड़कर देखने का प्रयास है। इस दृष्टि से आर्थिक विकास का मूल्यांकन उत्पादन और आय के साथ-साथ रोजगार, सामाजिक सुरक्षा, मानवीय गरिमा, अवसरों की उपलब्धता और सामाजिक स्थिरता जैसे आयामों के आधार पर भी किया जा सकता है।

विकेंद्रीकरण और स्वावलंबन

एकात्म मानववाद के आर्थिक विचार में विकेंद्रीकरण और स्वावलंबन की चर्चा महत्वपूर्ण है। अत्यधिक केंद्रीकृत आर्थिक व्यवस्था में निर्णय लेने की प्रक्रिया स्थानीय आवश्यकताओं और समुदायों से दूर हो सकती है। इसके विपरीत विकेंद्रीकरण स्थानीय परिस्थितियों, संसाधनों और आवश्यकताओं के अनुरूप आर्थिक गतिविधियों के विकास की संभावना प्रस्तुत करता है। स्वावलंबन का अर्थ पूर्ण आर्थिक अलगाव नहीं है, बल्कि व्यक्ति और समुदाय की ऐसी क्षमता से जो उन्हें अपनी मूलभूत आवश्यकताओं की पूर्ति और आर्थिक निर्णयों में सक्रिय भूमिका निभाने में सक्षम बनाए। स्थानीय उत्पादन, रोजगार और सामुदायिक सहभागिता को महत्व देने वाली दृष्टि आर्थिक गतिविधि को सामाजिक जीवन से जोड़ सकती है। यहाँ वसुधैव कुटुंबकम के साथ संबंध को सावधानीपूर्वक समझना आवश्यक है। विश्व-परिवार की भावना वैश्विक सहयोग का समर्थन कर सकती है, जबकि स्वावलंबन स्थानीय क्षमता को महत्व देता है। दोनों को विरोधी मानना आवश्यक नहीं है। स्थानीय स्वावलंबन और व्यापक वैश्विक सहयोग एक साथ संभव हो सकते हैं, बशर्ते आर्थिक संबंध केवल निर्भरता अथवा असमान शक्ति-संबंधों पर आधारित न हों।

मानव-केंद्रित विकास

एकात्म मानववाद की केंद्रीय विशेषता उसका मानव-केंद्रित स्वरूप है। यहाँ मनुष्य को विकास का साधन मात्र नहीं, बल्कि विकास की प्रक्रिया का प्रमुख उद्देश्य माना जाता है। मानव-केंद्रित विकास का अर्थ यह है कि आर्थिक और राजनीतिक संस्थाएँ मानव जीवन की वास्तविक आवश्यकताओं, क्षमताओं और गरिमा को ध्यान में रखते हुए निर्मित हों। मनुष्य के शरीर, मन, बुद्धि और आत्मा के समन्वित विकास की अवधारणा इस दृष्टि को विशिष्ट बनाती है। शिक्षा, स्वास्थ्य, रोजगार और आर्थिक सुरक्षा जैसे भौतिक एवं सामाजिक आयाम महत्वपूर्ण हैं, किंतु मानवीय विकास का अंतिम अर्थ केवल भौतिक समृद्धि नहीं माना जाता। नैतिक चेतना, सामाजिक उत्तरदायित्व और आत्मिक संतुलन भी मानव जीवन की गुणवत्ता से जुड़े हुए हैं। वसुधैव कुटुंबकम के संदर्भ में यह मानव-केंद्रित दृष्टि सार्वभौमिक मानवीय गरिमा के प्रश्न से जुड़ती है। यदि विश्व को परिवार के रूप में देखा जाता है, तो किसी व्यक्ति की गरिमा और कल्याण को उसकी भौगोलिक, राष्ट्रीय या सांस्कृतिक पहचान के आधार पर पूर्णतः गौण नहीं माना जा सकता। इस प्रकार दोनों अवधारणाएँ मानव जीवन के मूल्य को व्यापक सामाजिक संदर्भ में स्थापित करने की संभावना प्रदान करती हैं।

प्रकृति और विकास का संतुलन

आधुनिक विकास मॉडल की एक प्रमुख चुनौती आर्थिक वृद्धि और पर्यावरणीय संरक्षण के बीच संतुलन स्थापित करना है। प्राकृतिक संसाधनों के अत्यधिक दोहन, प्रदूषण और जैव-विविधता में कमी ने यह प्रश्न महत्वपूर्ण बना दिया है कि विकास की सीमा और दिशा क्या होनी चाहिए। एकात्म मानववाद की समग्र दृष्टि मनुष्य को प्रकृति से पूर्णतः पृथक् मानने के बजाय व्यापक जीवन-व्यवस्था का हिस्सा मानने की दिशा में विचार करने का आधार देती है। इससे विकास के ऐसे मॉडल पर विचार संभव होता है जिसमें प्राकृतिक संसाधनों का उपयोग विवेकपूर्ण और दीर्घकालिक दृष्टि से किया जाए। वसुधैव कुटुंबकम् को यदि व्यापक नैतिक अवधारणा के रूप में पढ़ा जाए, तो पृथ्वी को साझा जीवन-स्थान मानने की भावना पर्यावरणीय उत्तरदायित्व के लिए वैचारिक आधार प्रदान कर सकती है। जलवायु परिवर्तन जैसी समस्याएँ किसी एक समाज या राष्ट्र की सीमाओं में नियंत्रित नहीं की जा सकती; इनके समाधान के लिए अंतरराष्ट्रीय सहयोग और साझा उत्तरदायित्व आवश्यक है। इस प्रकार दोनों अवधारणाओं को सतत विकास और पर्यावरणीय न्याय के आधुनिक विमर्श से जोड़ा जा सकता है, यद्यपि इसके लिए समकालीन पर्यावरणीय सिद्धांतों के साथ अधिक विशिष्ट तुलनात्मक अध्ययन आवश्यक है।

सामाजिक उत्तरदायित्व और सामूहिक कल्याण

एकात्म मानववाद व्यक्ति के अधिकारों को उसके सामाजिक दायित्वों से पृथक् नहीं करता। व्यक्ति समाज से अनेक प्रकार के लाभ प्राप्त करता है, इसलिए समाज के प्रति उसका उत्तरदायित्व भी स्वीकार किया जाता है। इस दृष्टिकोण में स्वतंत्रता का अर्थ पूर्ण स्वेच्छाचारिता नहीं, बल्कि उत्तरदायित्वपूर्ण स्वतंत्रता है। वसुधैव कुटुंबकम् की भावना भी व्यक्ति को व्यापक मानव समुदाय से जोड़ती है। यदि दूसरे मनुष्य को परिवार का सदस्य माना जाता है, तो उसके प्रति नैतिक उत्तरदायित्व की भावना उत्पन्न होती है। इस प्रकार अधिकार और दायित्व, व्यक्ति और समाज तथा स्वतंत्रता और उत्तरदायित्व के बीच संतुलन दोनों विचारों के तुलनात्मक अध्ययन का महत्वपूर्ण क्षेत्र बन जाता है।

समग्र मूल्यांकन

एकात्म मानववाद के सामाजिक, आर्थिक और मानवीय आयामों का अध्ययन यह स्पष्ट करता है कि इसका उद्देश्य केवल आर्थिक व्यवस्था का कोई वैकल्पिक मॉडल प्रस्तुत करना नहीं, बल्कि विकास की आधारभूत मान्यताओं पर पुनर्विचार करना भी है। व्यक्ति की गरिमा, सामाजिक समरसता, अंत्योदय, स्वावलंबन, विकेंद्रीकरण और प्रकृति के साथ संतुलन जैसे तत्व इसके व्यापक मानवीय दृष्टिकोण को व्यक्त करते हैं। वसुधैव कुटुंबकम् के साथ इसका संबंध विशेष रूप से तब स्पष्ट होता है जब विकास और कल्याण की सीमाओं को स्थानीय अथवा राष्ट्रीय हित से आगे बढ़ाकर व्यापक मानवीय हित के संदर्भ में देखा जाता है। फिर भी दोनों अवधारणाओं के बीच संबंध को स्थापित करते समय यह अंतर बनाए रखना आवश्यक है कि एकात्म मानववाद आधुनिक सामाजिक-आर्थिक चिंतन का अपेक्षाकृत व्यवस्थित प्रतिपादन है, जबकि वसुधैव कुटुंबकम् एक प्राचीन दार्शनिक-नैतिक सूत्र है। इसलिए दोनों का संबंध प्रत्यक्ष समानता के बजाय साझा मूल्यों और वैचारिक संवाद के स्तर पर अधिक सार्थक रूप से समझा जा सकता है।

6. समकालीन वैश्विक संदर्भ में प्रासंगिकता

इक्कीसवीं सदी में विश्व सामाजिक, आर्थिक, पर्यावरणीय और तकनीकी स्तर पर तीव्र परिवर्तन के दौर से गुजर रहा है। वैश्वीकरण ने विभिन्न समाजों और अर्थव्यवस्थाओं को पहले की तुलना में अधिक परस्पर निर्भर बनाया है, जबकि डिजिटल संचार ने भौगोलिक दूरी के महत्व को कई क्षेत्रों में कम किया है। इसके साथ ही आर्थिक असमानता, पर्यावरणीय संकट, संसाधनों पर दबाव, सामाजिक ध्रुवीकरण, सशस्त्र संघर्ष और मानवीय विस्थापन जैसी समस्याएँ भी वैश्विक स्तर पर चुनौती प्रस्तुत कर रही हैं। ऐसी परिस्थितियों में विकास और प्रगति की उन अवधारणाओं का पुनर्मूल्यांकन आवश्यक हो जाता है जो मानव जीवन को मुख्यतः आर्थिक उत्पादन और उपभोग के संदर्भ में परिभाषित करती हैं। एकात्म मानववाद और वसुधैव कुटुंबकम् की अवधारणाएँ इसी व्यापक विमर्श में भारतीय वैचारिक परिप्रेक्ष्य उपलब्ध कराती हैं।

वैश्वीकरण और विश्व-परिवार की अवधारणा

वैश्वीकरण ने आर्थिक और सामाजिक संबंधों को राष्ट्रीय सीमाओं से परे विस्तारित किया है। वस्तुओं, सेवाओं, पूँजी, ज्ञान और तकनीक का अंतरराष्ट्रीय प्रवाह अनेक देशों की अर्थव्यवस्थाओं को एक-दूसरे से जोड़ता है। एक क्षेत्र में उत्पन्न आर्थिक या पर्यावरणीय संकट का प्रभाव अन्य क्षेत्रों पर भी पड़ सकता है। इस बढ़ती परस्पर निर्भरता के संदर्भ में वसुधैव कुटुंबकम् की विश्व-परिवार संबंधी अवधारणा को एक नैतिक दृष्टिकोण के रूप में पढ़ा जा सकता है। विश्व-परिवार की भावना का अर्थ यह नहीं है कि विभिन्न राष्ट्रों की विशिष्ट राजनीतिक और आर्थिक पहचान समाप्त हो जाए। इसके बजाय इसका संभावित अर्थ यह है कि राष्ट्रीय हितों के साथ व्यापक मानवीय हितों को भी ध्यान में रखा जाए। वैश्विक सहयोग, मानवीय सहायता, ज्ञान-विनिमय और साझा समस्याओं के समाधान में ऐसी दृष्टि उपयोगी वैचारिक आधार प्रदान कर सकती है। एकात्म मानववाद इस संदर्भ में व्यक्ति और समाज के संबंध से आगे बढ़कर राष्ट्र और व्यापक मानवता के संबंध पर विचार करने का अवसर देता है। यदि राष्ट्र को व्यापक सामाजिक जीवन की एक इकाई माना जाए, तो उसका उद्देश्य केवल प्रतिस्पर्धी शक्ति-संचय न होकर मानव कल्याण की दिशा में योगदान करना भी हो सकता है। इस प्रकार वैश्वीकरण को केवल आर्थिक एकीकरण के रूप में न देखकर मानवीय और नैतिक उत्तरदायित्व की प्रक्रिया के रूप में भी समझने की संभावना उत्पन्न होती है।

आर्थिक असमानता और अंत्योदय

वैश्विक आर्थिक विकास के बावजूद विभिन्न देशों और समाजों के भीतर तथा उनके बीच आर्थिक असमानता एक महत्वपूर्ण विमर्श बना हुआ है। आर्थिक वृद्धि के लाभों का वितरण समान नहीं होता और अनेक समुदायों के सामने रोजगार, शिक्षा, स्वास्थ्य, आवास तथा सामाजिक सुरक्षा से जुड़ी चुनौतियाँ बनी रहती हैं। एकात्म मानववाद का अंत्योदय-आधारित दृष्टिकोण विकास के इसी प्रश्न को मानवीय कसौटी से देखने की संभावना प्रदान करता है। यदि विकास का मूल्यांकन केवल राष्ट्रीय आय अथवा उत्पादन की वृद्धि से किया जाए, तो समाज के कमजोर वर्गों की वास्तविक स्थिति पर्याप्त रूप से सामने नहीं आ सकती। इसके विपरीत, अंतिम व्यक्ति की आवश्यकताओं और गरिमा को विकास के मूल्यांकन का हिस्सा बनाना विकास की सामाजिक गुणवत्ता पर ध्यान केंद्रित करता है। वसुधैव कुटुंबकम् इस प्रश्न को और व्यापक स्तर पर ले जा सकता है। यदि मानवता को एक व्यापक परिवार माना जाए, तो वैश्विक असमानताओं को केवल राष्ट्रों के आंतरिक विषय के रूप में देखने के बजाय उनके मानवीय प्रभाव पर भी विचार किया जा सकता है। हालांकि, वैश्विक आर्थिक असमानता के समाधान के लिए केवल नैतिक

आदर्श पर्याप्त नहीं हैं; इसके लिए संस्थागत, आर्थिक और नीतिगत उपायों की आवश्यकता होती है। इसलिए वसुधैव कुटुंबकम को समाधान के पूर्ण कार्यक्रम के बजाय एक नैतिक दिशा-सूचक के रूप में समझना अधिक उचित होगा।

पर्यावरणीय संकट और प्रकृति के साथ संतुलन

जलवायु परिवर्तन, जैव-विविधता का क्षरण, जल-संकट और प्राकृतिक संसाधनों का अत्यधिक दोहन वर्तमान समय की प्रमुख वैश्विक चुनौतियों में शामिल हैं। इन समस्याओं की विशेषता यह है कि इनके कारण और प्रभाव राजनीतिक सीमाओं तक सीमित नहीं रहते। किसी एक क्षेत्र में पर्यावरणीय क्षति का प्रभाव अन्य क्षेत्रों और आने वाली पीढ़ियों पर भी पड़ सकता है। एकात्म मानववाद की समग्र मानव-दृष्टि मनुष्य को व्यापक प्राकृतिक व्यवस्था से पृथक करके देखने की सीमाओं पर विचार करने का आधार प्रदान करती है। विकास को यदि मानव जीवन की वास्तविक आवश्यकताओं और दीर्घकालिक सामाजिक हितों से जोड़कर देखा जाए, तो प्राकृतिक संसाधनों के विवेकपूर्ण उपयोग और पर्यावरणीय संतुलन को विकास का अभिन्न पक्ष माना जा सकता है। वसुधैव कुटुंबकम की व्यापक व्याख्या पृथ्वी को साझा जीवन-स्थान के रूप में देखने की नैतिक संभावना प्रस्तुत करती है। इस संदर्भ में पर्यावरण संरक्षण केवल वर्तमान मानव समुदाय का प्रश्न नहीं रह जाता, बल्कि भविष्य की पीढ़ियों और व्यापक जीवन-जगत के प्रति उत्तरदायित्व का विषय बन जाता है। फिर भी यह स्पष्ट करना आवश्यक है कि प्राचीन दार्शनिक सूत्रों को आधुनिक पर्यावरण विज्ञान का प्रत्यक्ष विकल्प नहीं माना जा सकता। उनका महत्व मुख्यतः नैतिक और वैचारिक आधार प्रदान करने में है।

वैश्विक संघर्ष और सह-अस्तित्व

समकालीन विश्व में विभिन्न प्रकार के राजनीतिक और सैन्य संघर्ष अंतरराष्ट्रीय शांति और सुरक्षा के लिए चुनौती बने हुए हैं। ऐसे संघर्षों के पीछे ऐतिहासिक, राजनीतिक, आर्थिक, क्षेत्रीय और सुरक्षा संबंधी अनेक कारण हो सकते हैं। इसलिए किसी एक वैचारिक सूत्र से उनका समाधान संभव नहीं माना जा सकता। फिर भी वसुधैव कुटुंबकम का विश्वबंधुत्व संबंधी आदर्श संघर्षों को केवल शक्ति-संतुलन के दृष्टिकोण से देखने के अतिरिक्त एक नैतिक दृष्टिकोण उपलब्ध कराता है। यदि विभिन्न समुदायों और राष्ट्रों के संबंधों में दूसरे के अस्तित्व और गरिमा को स्वीकार किया जाए, तो संवाद, सहयोग और शांतिपूर्ण सह-अस्तित्व की संभावना को वैचारिक आधार मिल सकता है। एकात्म मानववाद की समरसता संबंधी दृष्टि भी संघर्ष के स्थान पर संतुलन और सहयोग की संभावना पर विचार करती है। व्यक्ति और समाज के भीतर संबंधों को परस्पर विरोध के स्थान पर पूरकता के आधार पर समझने की यह प्रवृत्ति व्यापक सामाजिक संबंधों के अध्ययन में उपयोगी हो सकती है। हालांकि, अंतरराष्ट्रीय संघर्षों के समाधान के लिए कूटनीतिक, संस्थागत और राजनीतिक प्रक्रियाएँ आवश्यक रहती हैं।

तकनीकी विकास और मानवीय मूल्य

डिजिटल प्रौद्योगिकी, कृत्रिम बुद्धिमत्ता और स्वचालन ने मानव जीवन के अनेक क्षेत्रों को परिवर्तित किया है। तकनीकी विकास ने ज्ञान और संचार की उपलब्धता बढ़ाई है, किंतु इसके साथ निजता, रोजगार, डिजिटल असमानता, सूचना की विश्वसनीयता और मानवीय संबंधों की प्रकृति से जुड़े प्रश्न भी उभरे हैं।

एकात्म मानववाद की मानव-केंद्रित दृष्टि इस प्रश्न को उठाने का आधार प्रदान करती है कि तकनीकी प्रगति का अंतिम उद्देश्य क्या होना चाहिए। यदि तकनीक केवल उत्पादन और उपभोग की क्षमता बढ़ाने का साधन बन जाए, तो उसके सामाजिक और मानवीय प्रभावों की उपेक्षा की संभावना रहती है। इसके विपरीत तकनीकी विकास को मानव गरिमा, सामाजिक कल्याण और व्यापक सार्वजनिक हित से जोड़कर देखना एक अलग मूल्य-आधारित दृष्टिकोण प्रस्तुत करता है। वसुधैव कुटुंबकम् के संदर्भ में डिजिटल तकनीक विश्व के विभिन्न समुदायों के बीच ज्ञान और संवाद को बढ़ाने का माध्यम बन सकती है। किंतु डिजिटल विभाजन यह भी दिखाता है कि तकनीकी संसाधनों की उपलब्धता समान नहीं है। इसलिए तकनीकी विकास को सार्वभौमिक मानव कल्याण से जोड़ने के लिए समान अवसर, डिजिटल पहुँच और जिम्मेदार तकनीकी शासन जैसे प्रश्नों पर विचार आवश्यक है।

सतत विकास और समग्र दृष्टि

आधुनिक विकास-विमर्श में सतत विकास का महत्व इस कारण बढ़ा है कि वर्तमान आवश्यकताओं की पूर्ति और भविष्य की पीढ़ियों की आवश्यकताओं के बीच संतुलन आवश्यक माना जाता है। यह दृष्टिकोण आर्थिक विकास, सामाजिक समावेशन और पर्यावरणीय संरक्षण के बीच संतुलन स्थापित करने का प्रयास करता है।

एकात्म मानववाद की समग्र दृष्टि के साथ सतत विकास का वैचारिक संवाद इस आधार पर संभव है कि दोनों विकास को केवल एकल आर्थिक सूचक से परिभाषित करने की सीमाओं की ओर ध्यान आकर्षित करते हैं। मानव जीवन की भौतिक, सामाजिक, नैतिक और पर्यावरणीय आवश्यकताओं को एक व्यापक ढाँचे में समझना विकास की बहुआयामी अवधारणा को मजबूत कर सकता है। वसुधैव कुटुंबकम् इस विमर्श में अंतरपीढ़ी और वैश्विक उत्तरदायित्व की नैतिक भावना को जोड़ने की संभावना रखता है। यदि पृथ्वी को साझा परिवार के रूप में देखा जाए, तो प्राकृतिक संसाधनों के उपयोग में केवल वर्तमान पीढ़ी के हितों के बजाय व्यापक और दीर्घकालिक हितों पर भी विचार करना आवश्यक हो जाता है।

वैश्विक नागरिकता और मानवीय उत्तरदायित्व

आज वैश्विक नागरिकता की अवधारणा शिक्षा, मानवाधिकार, पर्यावरण और अंतरराष्ट्रीय सहयोग के संदर्भ में चर्चा का विषय है। इसका उद्देश्य स्थानीय या राष्ट्रीय पहचान को समाप्त करना नहीं, बल्कि व्यक्ति में व्यापक वैश्विक उत्तरदायित्व की चेतना विकसित करना है। वसुधैव कुटुंबकम् इस विचार के लिए एक सांस्कृतिक एवं दार्शनिक संदर्भ उपलब्ध करा सकता है। व्यक्ति अपनी स्थानीय और राष्ट्रीय पहचान को बनाए रखते हुए भी व्यापक मानव समुदाय के प्रति उत्तरदायित्व अनुभव कर सकता है। इसी प्रकार एकात्म मानववाद में व्यक्ति की पहचान को उसके परिवार, समाज और राष्ट्र के साथ जोड़ने वाली दृष्टि यह समझने में सहायक हो सकती है कि व्यक्ति का सामाजिक अस्तित्व अनेक स्तरों पर निर्मित होता है। इस प्रकार स्थानीय पहचान और वैश्विक उत्तरदायित्व को अनिवार्यतः परस्पर विरोधी मानने की आवश्यकता नहीं है। दोनों के बीच संतुलन की संभावना एक ऐसी सामाजिक दृष्टि को जन्म दे सकती है जिसमें सांस्कृतिक विविधता के साथ सार्वभौमिक मानवीय मूल्यों को भी महत्व दिया जाए।

समकालीन प्रासंगिकता का आलोचनात्मक मूल्यांकन

एकात्म मानववाद और वसुधैव कुटुंबकम् की समकालीन प्रासंगिकता को स्वीकार करते समय उनके प्रयोग की सीमाओं को भी ध्यान में रखना आवश्यक है। प्राचीन दार्शनिक अवधारणाओं को आधुनिक समस्याओं पर लागू करते समय ऐतिहासिक संदर्भों में अंतर की उपेक्षा नहीं की जानी चाहिए। इसी प्रकार एकात्म मानववाद के वैचारिक प्रतिपादन को वर्तमान सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक परिस्थितियों पर सीधे लागू करने से पहले उसके मूल संदर्भ और आधुनिक संस्थागत संरचनाओं के बीच अंतर का विश्लेषण आवश्यक है।

इन अवधारणाओं का महत्व मुख्यतः इस बात में देखा जा सकता है कि वे विकास, समाज और मानव संबंधों को व्यापक नैतिक संदर्भ में समझने की संभावना प्रदान करती हैं। वे यह प्रश्न उठाती हैं कि आर्थिक वृद्धि का उद्देश्य क्या है, विकास का अंतिम लाभार्थी कौन है, व्यक्ति और समाज का संबंध कैसा होना चाहिए तथा मानवता और प्रकृति के बीच किस प्रकार का संतुलन स्थापित किया जा सकता है।

इस प्रकार समकालीन वैश्विक संदर्भ में एकात्म मानववाद और वसुधैव कुटुंबकम् को किसी एक नीति अथवा संस्थागत व्यवस्था के प्रत्यक्ष विकल्प के रूप में देखने की अपेक्षा **मानव-केंद्रित, समावेशी, उत्तरदायी और सह-अस्तित्वपरक विकास के लिए वैचारिक संसाधन** के रूप में देखा जा सकता है। इनकी वास्तविक उपयोगिता इस बात पर निर्भर करती है कि इनके मूल सिद्धांतों को आधुनिक सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक और पर्यावरणीय संस्थाओं के साथ किस प्रकार आलोचनात्मक रूप से जोड़ा जाता है।

7. आलोचनात्मक विमर्श

एकात्म मानववाद और वसुधैव कुटुंबकम् के बीच वैचारिक संबंध का अध्ययन करते समय केवल दोनों के बीच समानताओं को रेखांकित करना पर्याप्त नहीं है। उच्चस्तरीय अकादमिक विमर्श के लिए यह आवश्यक है कि इन अवधारणाओं के दार्शनिक आधार, ऐतिहासिक संदर्भ, व्यावहारिक निहितार्थ और संभावित सीमाओं का भी आलोचनात्मक परीक्षण किया जाए। दोनों अवधारणाएँ व्यापक मानव-कल्याण, सामाजिक संबंधों और समग्र जीवन-दृष्टि पर बल देती हैं, किंतु उनकी उत्पत्ति, प्रयोजन और वैचारिक संरचना समान नहीं है। इसलिए इनके संबंध को समझने के लिए साम्य और भिन्नता दोनों को साथ-साथ देखना आवश्यक है।

सार्वभौमिकता और सांस्कृतिक संदर्भ का प्रश्न

वसुधैव कुटुंबकम् का मूल कथन संपूर्ण पृथ्वी को परिवार के रूप में देखने की व्यापक भावना व्यक्त करता है। इसका नैतिक दायरा किसी एक समुदाय, क्षेत्र या राष्ट्र तक सीमित नहीं रहता। दूसरी ओर, एकात्म मानववाद भारतीय सांस्कृतिक संदर्भ में विकसित एक ऐसी विचार-दृष्टि है जो मनुष्य, समाज और राष्ट्र के संबंधों को भारतीय जीवन-दर्शन के आधार पर समझने का प्रयास करती है।

यहाँ एक महत्वपूर्ण सैद्धांतिक प्रश्न उत्पन्न होता है कि किसी विशिष्ट सांस्कृतिक परंपरा से विकसित विचार किस सीमा तक सार्वभौमिक दावे प्रस्तुत कर सकता है। एकात्म मानववाद की भारतीय सांस्कृतिक पृष्ठभूमि उसकी विशिष्टता का स्रोत है, किंतु इसी कारण यह प्रश्न भी उठता है कि इसके सिद्धांतों को विविध सांस्कृतिक और राजनीतिक संदर्भों में किस प्रकार लागू किया जा सकता है। दूसरी ओर, वसुधैव कुटुंबकम् की सार्वभौमिकता को आधुनिक बहुलतावादी विश्व में व्याख्यायित करते समय भी यह सावधानी आवश्यक है कि इसे सांस्कृतिक एकरूपता के रूप में न समझा जाए।

इस दृष्टि से दोनों अवधारणाओं की सार्वभौमिक प्रासंगिकता का दावा तभी अधिक मजबूत हो सकता है जब उनकी मूल सांस्कृतिक विशिष्टता और व्यापक मानवीय मूल्यों के बीच अंतर स्पष्ट रखा जाए।

राष्ट्र और विश्व-मानवता के बीच संबंध

एकात्म मानववाद में राष्ट्र की अवधारणा महत्वपूर्ण स्थान रखती है। राष्ट्र को केवल राजनीतिक राज्य के रूप में न देखकर सांस्कृतिक एवं सामाजिक चेतना से जोड़कर समझने का प्रयास किया जाता है। इसके विपरीत वसुधैव कुटुंबकम का केंद्र संपूर्ण विश्व को एक परिवार के रूप में देखने की भावना है। इससे राष्ट्र और विश्व-मानवता के बीच संबंध का प्रश्न उत्पन्न होता है। क्या मजबूत राष्ट्रीय पहचान और व्यापक विश्वबंधुत्व एक साथ संभव हैं? सैद्धांतिक रूप से दोनों को परस्पर विरोधी मानना आवश्यक नहीं है, क्योंकि व्यक्ति एक साथ स्थानीय, राष्ट्रीय और वैश्विक समुदायों का सदस्य हो सकता है। किंतु व्यावहारिक परिस्थितियों में राष्ट्रीय हित और व्यापक वैश्विक हितों के बीच टकराव उत्पन्न हो सकता है। इसलिए वसुधैव कुटुंबकम को आधुनिक अंतरराष्ट्रीय संबंधों के संदर्भ में समझते समय केवल नैतिक आदर्श पर्याप्त नहीं है। वैश्विक संस्थाओं, संसाधनों के वितरण, सुरक्षा हितों और विभिन्न राष्ट्रों की राजनीतिक प्राथमिकताओं को भी ध्यान में रखना आवश्यक है। इसी प्रकार एकात्म मानववाद की राष्ट्र संबंधी अवधारणा का मूल्यांकन करते समय यह देखना आवश्यक है कि राष्ट्रीय एकात्मता और व्यापक मानवतावाद के बीच संतुलन किस प्रकार स्थापित किया जाता है।

व्यक्ति और समष्टि : स्वतंत्रता बनाम उत्तरदायित्व

एकात्म मानववाद व्यक्ति और समाज के संबंध को परस्पर पूरकता के आधार पर देखने का प्रयास करता है। इस दृष्टिकोण में व्यक्ति समाज से अलग अस्तित्व नहीं रखता और उसके अधिकारों के साथ सामाजिक दायित्व भी जुड़े होते हैं। यह दृष्टि आधुनिक राजनीतिक दर्शन में व्यक्ति की स्वायत्तता और सामाजिक उत्तरदायित्व के बीच संतुलन के प्रश्न से जुड़ती है। यहाँ आलोचनात्मक प्रश्न यह है कि सामूहिक हित की अवधारणा को किस सीमा तक स्वीकार किया जाए ताकि व्यक्ति की स्वतंत्रता और विशिष्टता प्रभावित न हो। यदि समष्टि के हित को सर्वोच्च मान लिया जाए, तो व्यक्तिगत स्वतंत्रता के लिए पर्याप्त स्थान बनाए रखने की चुनौती उत्पन्न हो सकती है। दूसरी ओर, यदि व्यक्ति के हित को पूर्णतः स्वतंत्र और सामाजिक दायित्वों से पृथक माना जाए, तो सामाजिक एकता और सामूहिक कल्याण प्रभावित हो सकता है। इसलिए एकात्म मानववाद की समग्रता का आलोचनात्मक परीक्षण इस आधार पर भी किया जाना चाहिए कि वह व्यक्ति की स्वतंत्रता, गरिमा और सामाजिक उत्तरदायित्व के बीच किस प्रकार का संतुलन प्रस्तावित करता है। वसुधैव कुटुंबकम की विश्व-परिवार भावना भी इसी प्रश्न को वैश्विक स्तर पर विस्तारित करती है—व्यक्ति और समुदाय के हितों के बीच संतुलन किस प्रकार स्थापित किया जाए।

अंत्योदय और सामाजिक न्याय

अंत्योदय एकात्म मानववाद के सामाजिक-आर्थिक विमर्श का महत्वपूर्ण तत्व है। समाज के अंतिम व्यक्ति को विकास के केंद्र में रखने की यह भावना सामाजिक न्याय और समावेशी विकास के प्रश्न से जुड़ती है। फिर भी अंत्योदय की अवधारणा को व्यावहारिक सामाजिक नीति में रूपांतरित करने के लिए यह निर्धारित करना आवश्यक है कि 'अंतिम व्यक्ति' की पहचान किन सामाजिक, आर्थिक और संस्थागत मानदंडों के आधार पर की जाएगी।

आधुनिक समाज में वंचना केवल आय की कमी से निर्धारित नहीं होती। शिक्षा, स्वास्थ्य, रोजगार, सामाजिक स्थिति, लैंगिक असमानता, भौगोलिक स्थिति और संस्थागत पहुँच जैसे अनेक कारक व्यक्ति की सामाजिक स्थिति को प्रभावित कर सकते हैं। इसलिए अंत्योदय को व्यापक सामाजिक न्याय के संदर्भ में समझने के लिए बहुआयामी वंचना पर भी विचार आवश्यक है।

वसुधैव कुटुंबकम् के संदर्भ में भी इसी प्रकार का प्रश्न उठता है। यदि समस्त मानवता एक परिवार है, तो वैश्विक असमानताओं और संसाधनों के असमान वितरण के प्रश्न को किस प्रकार संबोधित किया जाए? केवल विश्वबंधुत्व की भावना असमानताओं को समाप्त नहीं करती; इसके लिए संस्थागत सहयोग, नीतिगत हस्तक्षेप और संसाधनों के न्यायपूर्ण वितरण की आवश्यकता होती है। इस प्रकार नैतिक आदर्श और व्यावहारिक नीति के बीच की दूरी को समझना आवश्यक है।

आर्थिक विकास की अवधारणा और उसकी सीमाएँ

एकात्म मानववाद आर्थिक विकास को मनुष्य के व्यापक जीवन से जोड़ता है और केवल उत्पादन एवं उपभोग पर आधारित विकास की सीमाओं की ओर संकेत करता है। यह दृष्टिकोण आधुनिक आर्थिक चिंतन के उस पक्ष के लिए महत्वपूर्ण प्रश्न प्रस्तुत करता है जिसमें आर्थिक वृद्धि को प्रगति का प्रमुख संकेतक माना जाता है।

फिर भी आलोचनात्मक स्तर पर यह प्रश्न उठता है कि यदि आर्थिक वृद्धि को पर्याप्त नहीं माना जाए, तो विकास को मापने के लिए कौन-से वैकल्पिक या पूरक मानदंड अपनाए जाएँ। रोजगार, शिक्षा, स्वास्थ्य, सामाजिक सुरक्षा, पर्यावरणीय स्थिरता और जीवन की गुणवत्ता जैसे सूचक इस संदर्भ में महत्वपूर्ण हो सकते हैं। अतः एकात्म मानववाद के आर्थिक दृष्टिकोण को समकालीन विकास-अध्ययनों के साथ संवाद में रखकर अधिक व्यवस्थित रूप से समझना आवश्यक है। इसी प्रकार स्वावलंबन और विकेंद्रीकरण की अवधारणाओं के व्यावहारिक पक्ष का भी परीक्षण आवश्यक है। स्थानीय अर्थव्यवस्थाएँ सामाजिक और आर्थिक आत्मनिर्भरता को बढ़ा सकती हैं, लेकिन आधुनिक वैश्विक अर्थव्यवस्था में पूर्ण स्थानीय आत्मनिर्भरता न तो हर क्षेत्र में संभव है और न ही आवश्यक। इसलिए स्थानीय क्षमता और वैश्विक आर्थिक सहयोग के बीच संतुलन की आवश्यकता बनी रहती है।

आधुनिक विचारधाराओं के साथ तुलनात्मक प्रश्न

एकात्म मानववाद को समझने के लिए उसे आधुनिक राजनीतिक एवं आर्थिक विचारधाराओं के संदर्भ में देखना उपयोगी है। पूँजीवाद व्यक्ति की आर्थिक स्वतंत्रता और बाजार-आधारित संसाधन-वितरण पर बल देता है, जबकि समाजवाद आर्थिक असमानताओं को कम करने और संसाधनों के अधिक सामूहिक नियंत्रण पर जोर देता है। उदारवाद व्यक्तिगत स्वतंत्रता और अधिकारों को केंद्रीय महत्व देता है। एकात्म मानववाद इन विचारधारात्मक प्रतिमानों से अलग एक भारतीय वैचारिक आधार विकसित करने का प्रयास करता है जिसमें व्यक्ति, समाज, संस्कृति और नैतिकता को एक समग्र संरचना में समझा जाता है। हालाँकि, किसी विचारधारा को केवल इस आधार पर समझना पर्याप्त नहीं है कि वह किन अन्य विचारधाराओं से भिन्न है। यह भी देखना आवश्यक है कि उसकी संस्थागत व्यवस्था कैसी होगी, निर्णय लेने की प्रक्रिया में व्यक्ति और समुदाय की भूमिका क्या होगी तथा आर्थिक संसाधनों के वितरण के लिए कौन-से व्यावहारिक तंत्र आवश्यक होंगे।

इस दृष्टि से एकात्म मानववाद का अध्ययन दार्शनिक सिद्धांत और संस्थागत व्यवहार के बीच संबंध की समस्या को सामने लाता है। किसी विचार के नैतिक उद्देश्यों और उसके व्यावहारिक कार्यान्वयन के बीच अंतर हो सकता है। अतः एकात्म मानववाद की समकालीन प्रासंगिकता का मूल्यांकन करते समय उसके सिद्धांत और व्यवहार दोनों का स्वतंत्र परीक्षण आवश्यक है।

वसुधैव कुटुंबकम : आदर्श और व्यवहार के बीच अंतर

वसुधैव कुटुंबकम एक शक्तिशाली नैतिक आदर्श प्रस्तुत करता है, किंतु आधुनिक विश्व की राजनीतिक संरचना मुख्यतः संप्रभु राष्ट्र-राज्यों पर आधारित है। प्रत्येक राष्ट्र के अपने सुरक्षा, आर्थिक और राजनीतिक हित होते हैं। ऐसी परिस्थितियों में विश्व-परिवार की भावना को व्यवहार में लागू करना जटिल हो सकता है। उदाहरण के लिए, वैश्विक संसाधनों, व्यापार, तकनीकी ज्ञान और पर्यावरणीय दायित्वों के वितरण में विभिन्न देशों की प्राथमिकताएँ अलग हो सकती हैं। इसलिए वसुधैव कुटुंबकम को व्यावहारिक वैश्विक शासन के पूर्ण मॉडल के रूप में प्रस्तुत करने की अपेक्षा एक नैतिक दिशा के रूप में समझना अधिक उपयुक्त है। यह वैश्विक संबंधों में सहयोग, मानवीय गरिमा और साझा उत्तरदायित्व को महत्व देने का आधार प्रदान कर सकता है, लेकिन इन मूल्यों को संस्थागत रूप देने के लिए अलग-अलग नीतिगत तंत्र आवश्यक होंगे।

अवधारणाओं के आधुनिक पुनर्पाठ की आवश्यकता

एकात्म मानववाद और वसुधैव कुटुंबकम दोनों की समकालीन उपयोगिता इस बात पर निर्भर करती है कि उन्हें वर्तमान सामाजिक परिस्थितियों के संदर्भ में किस प्रकार पुनर्पाठित किया जाता है। आधुनिक समाज प्राचीन समाजों से संस्थागत, तकनीकी और आर्थिक रूप से अत्यधिक भिन्न हैं। इसलिए प्राचीन अवधारणाओं को वर्तमान समस्याओं पर सीधे आरोपित करने के बजाय उनके मूल नैतिक एवं दार्शनिक तत्वों की पहचान करना अधिक उपयुक्त है। वसुधैव कुटुंबकम के संदर्भ में सार्वभौमिक मानव गरिमा, सह-अस्तित्व, सहयोग और साझा उत्तरदायित्व जैसे मूल्यों को आधुनिक वैश्विक विमर्श से जोड़ा जा सकता है। इसी प्रकार एकात्म मानववाद के संदर्भ में समग्र मानव-विकास, अंत्योदय, सामाजिक समरसता, विकेंद्रीकरण और मानवीय गरिमा जैसे तत्वों को आधुनिक विकास और सामाजिक नीति के विमर्श में आलोचनात्मक रूप से परखा जा सकता है। इस प्रकार दोनों अवधारणाओं का आधुनिक पुनर्पाठ तभी अकादमिक रूप से सार्थक होगा जब उसमें न तो अतीत का आदर्शीकरण हो और न ही आधुनिक संदर्भों में उनकी यांत्रिक पुनरावृत्ति।

समग्र आलोचनात्मक निष्कर्ष

आलोचनात्मक परीक्षण से स्पष्ट होता है कि एकात्म मानववाद और वसुधैव कुटुंबकम के बीच महत्वपूर्ण वैचारिक साम्य मौजूद हैं, विशेषकर व्यक्ति और व्यापक समुदाय की अंतर्संबद्धता, सामाजिक समरसता, व्यापक कल्याण और सह-अस्तित्व के संदर्भ में। किंतु इन साम्यताओं के आधार पर दोनों अवधारणाओं को पूर्णतः समान मानना उचित नहीं होगा। उनकी ऐतिहासिक उत्पत्ति, वैचारिक उद्देश्य और व्यावहारिक दायरा अलग-अलग हैं।

एकात्म मानववाद आधुनिक सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक समस्याओं के संदर्भ में भारतीय दृष्टिकोण विकसित करने का प्रयास करता है, जबकि वसुधैव कुटुंबकम मूलतः व्यापक विश्वबंधुत्व और सार्वभौमिक संबंध की दार्शनिक-नैतिक भावना को अभिव्यक्त करता है। दोनों के बीच संबंध को सबसे अधिक सार्थक रूप से वैचारिक

संवाद और मूल्यगत अंतर्संबंध के रूप में समझा जा सकता है। इस आलोचनात्मक दृष्टि से देखा जाए तो इन अवधारणाओं की समकालीन प्रासंगिकता उनके किसी पूर्वनिर्धारित समाधान प्रदान करने में नहीं, बल्कि वर्तमान विकास, सामाजिक न्याय, पर्यावरणीय संतुलन और वैश्विक सहयोग से जुड़े प्रश्नों को एक व्यापक मानवीय एवं नैतिक परिप्रेक्ष्य में पुनः विचार करने की क्षमता में निहित है। यही दृष्टिकोण इस शोध को केवल वैचारिक प्रस्तुति से आगे बढ़ाकर एक विश्लेषणात्मक अकादमिक अध्ययन का स्वरूप प्रदान करता है।

8. निष्कर्ष

प्रस्तुत अध्ययन का उद्देश्य दीनदयाल उपाध्याय के एकात्म मानववाद और भारतीय दार्शनिक परंपरा की 'वसुधैव कुटुंबकम्' अवधारणा के बीच विद्यमान वैचारिक संबंध का विश्लेषण करना था। अध्ययन से यह स्पष्ट होता है कि दोनों अवधारणाएँ अलग-अलग ऐतिहासिक एवं वैचारिक संदर्भों में विकसित होने के बावजूद व्यक्ति, समाज और व्यापक मानव समुदाय के बीच अंतर्संबंध को महत्वपूर्ण स्थान देती हैं। एकात्म मानववाद आधुनिक सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक परिस्थितियों के संदर्भ में मनुष्य के समग्र विकास की अवधारणा प्रस्तुत करता है, जबकि वसुधैव कुटुंबकम् विश्व को एक परिवार के रूप में देखने वाली व्यापक नैतिक-दर्शनिक दृष्टि को अभिव्यक्त करता है। एकात्म मानववाद की मूल विशेषता उसकी समग्र मानव-दृष्टि है। इसमें मनुष्य को केवल आर्थिक प्राणी या राजनीतिक इकाई के रूप में नहीं, बल्कि शरीर, मन, बुद्धि और आत्मा के समन्वित स्वरूप के रूप में समझने का प्रयास किया गया है। इस दृष्टिकोण के अनुसार मानव विकास का उद्देश्य केवल भौतिक आवश्यकताओं की पूर्ति नहीं हो सकता; सामाजिक, नैतिक, बौद्धिक और आध्यात्मिक आयाम भी मानव जीवन की पूर्णता के लिए महत्वपूर्ण हैं। इस प्रकार एकात्म मानववाद विकास की उस संकीर्ण धारणा से आगे जाने का प्रयास करता है जिसमें आर्थिक उत्पादन और उपभोग को ही प्रगति का प्रमुख मानदंड माना जाता है।

वसुधैव कुटुंबकम् की अवधारणा इस समग्र दृष्टि को एक व्यापक वैश्विक संदर्भ प्रदान करती है। 'अयं निजः परो वेति' की संकीर्णता से आगे बढ़कर संपूर्ण पृथ्वी को परिवार के रूप में देखने का विचार मनुष्य की नैतिक चेतना के विस्तार का संकेत देता है। इसका केंद्रीय आग्रह यह है कि व्यक्ति और समुदाय अपने हितों को व्यापक मानव समुदाय के हितों से पूर्णतः पृथक् न मानें। इस दृष्टि में सह-अस्तित्व, पारस्परिक सम्मान, सहयोग और व्यापक लोककल्याण जैसे मूल्य महत्वपूर्ण हो जाते हैं। शोध से यह भी स्पष्ट होता है कि एकात्म मानववाद और वसुधैव कुटुंबकम् के बीच संबंध को केवल समानता के आधार पर स्थापित करना पर्याप्त नहीं है। दोनों के ऐतिहासिक संदर्भ, उद्देश्य और वैचारिक स्वरूप अलग हैं। वसुधैव कुटुंबकम् एक प्राचीन भारतीय दार्शनिक-नैतिक सूत्र है, जबकि एकात्म मानववाद आधुनिक काल में सामाजिक, राजनीतिक और आर्थिक प्रश्नों के संदर्भ में विकसित एक व्यवस्थित वैचारिक प्रतिपादन है। इसलिए दोनों के बीच संबंध को प्रत्यक्ष समानता के रूप में देखने के बजाय वैचारिक अंतर्संबंध और संवाद के रूप में समझना अधिक उपयुक्त है। व्यक्ति और समष्टि के संबंध के स्तर पर दोनों अवधारणाओं के बीच महत्वपूर्ण साम्य दिखाई देता है। एकात्म मानववाद व्यक्ति के विकास को परिवार और समाज से अलग नहीं करता, जबकि वसुधैव कुटुंबकम् इस संबंध को व्यापक मानव समुदाय तक विस्तारित करने की संभावना प्रस्तुत करता है। इस प्रकार व्यक्ति की पहचान केवल व्यक्तिगत हितों से निर्धारित न होकर व्यापक सामाजिक एवं मानवीय संबंधों से भी जुड़ती है। यह दृष्टिकोण आधुनिक समाज में अधिकारों के साथ उत्तरदायित्व और स्वतंत्रता के साथ सामाजिक दायित्व के प्रश्न को समझने के लिए उपयोगी आधार प्रदान करता है।

सामाजिक एवं आर्थिक स्तर पर **अंत्योदय** का विचार एकात्म मानववाद को विशेष मानवीय आयाम प्रदान करता है। विकास की सार्थकता को समाज के अंतिम व्यक्ति की स्थिति से जोड़ना यह संकेत देता है कि आर्थिक प्रगति का मूल्यांकन केवल समग्र उत्पादन या आय की वृद्धि से नहीं किया जाना चाहिए। सामाजिक न्याय, अवसरों की उपलब्धता, मानवीय गरिमा और वंचित समूहों के कल्याण को भी विकास के महत्वपूर्ण आयामों के रूप में देखा जाना आवश्यक है। वसुधैव कुटुंबकम इस विचार को व्यापक स्तर पर ले जाकर कल्याण की नैतिक सीमा को संपूर्ण मानव समुदाय तक विस्तारित करने की संभावना प्रस्तुत करता है।

इसी प्रकार पर्यावरणीय संदर्भ में दोनों अवधारणाओं के बीच एक महत्वपूर्ण वैचारिक संवाद स्थापित किया जा सकता है। आधुनिक विकास मॉडल ने आर्थिक और तकनीकी प्रगति को गति दी है, किंतु प्राकृतिक संसाधनों के अत्यधिक उपयोग और पर्यावरणीय असंतुलन ने विकास की दिशा और सीमा पर पुनर्विचार की आवश्यकता उत्पन्न की है। एकात्म मानववाद की समग्र दृष्टि और वसुधैव कुटुंबकम की व्यापक विश्व-दृष्टि मनुष्य और उसके परिवेश के संबंध को अधिक उत्तरदायी दृष्टिकोण से देखने का आधार प्रदान कर सकती हैं। हालांकि, इन दार्शनिक अवधारणाओं को आधुनिक पर्यावरणीय समस्याओं का प्रत्यक्ष नीतिगत समाधान मानने के बजाय उनके नैतिक एवं वैचारिक योगदान के रूप में समझना अधिक उचित है।

समकालीन वैश्वीकरण के संदर्भ में वसुधैव कुटुंबकम की प्रासंगिकता विशेष रूप से विश्व के बढ़ते परस्पर संबंधों के कारण सामने आती है। जलवायु परिवर्तन, महामारी, आर्थिक संकट, मानवीय विस्थापन और तकनीकी परिवर्तन जैसी समस्याएँ राष्ट्रीय सीमाओं तक सीमित नहीं रहतीं। इनके समाधान के लिए अंतरराष्ट्रीय सहयोग और साझा उत्तरदायित्व आवश्यक है। ऐसे संदर्भ में विश्व-परिवार की अवधारणा वैश्विक सहयोग को नैतिक आधार देने वाली दृष्टि के रूप में उपयोगी हो सकती है। दूसरी ओर, एकात्म मानववाद विकास और सामाजिक संगठन के प्रश्नों को मानवीय गरिमा, समरसता और अंत्योदय के साथ जोड़ने का वैचारिक आधार उपलब्ध कराता है।

फिर भी आलोचनात्मक अध्ययन यह संकेत करता है कि इन अवधारणाओं की समकालीन उपयोगिता को समझते समय उनकी सीमाओं और ऐतिहासिक संदर्भों की उपेक्षा नहीं की जानी चाहिए। प्राचीन दार्शनिक अवधारणाओं को आधुनिक राष्ट्र-राज्य, वैश्विक बाजार और तकनीकी समाज की संस्थागत संरचनाओं के साथ सीधे समान नहीं किया जा सकता। इसी प्रकार एकात्म मानववाद के दार्शनिक सिद्धांतों और उनके व्यावहारिक संस्थागत रूप के बीच भी विश्लेषण की आवश्यकता बनी रहती है। किसी भी वैचारिक आदर्श की वास्तविक उपयोगिता उसके मूल मूल्यों और समकालीन संस्थागत आवश्यकताओं के बीच प्रभावी संबंध स्थापित करने की क्षमता पर निर्भर करती है। अतः इस अध्ययन का समग्र निष्कर्ष यह है कि **एकात्म मानववाद और वसुधैव कुटुंबकम के बीच एक महत्वपूर्ण मूल्यगत एवं वैचारिक अंतर्संबंध स्थापित किया जा सकता है, किंतु दोनों को समान या पर्यायवाची अवधारणाएँ मानना उचित नहीं है।** एकात्म मानववाद आधुनिक संदर्भ में भारतीय समग्र मानव-दृष्टि को सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक विमर्श से जोड़ने का प्रयास करता है, जबकि वसुधैव कुटुंबकम मानव संबंधों के नैतिक दायरे को संपूर्ण विश्व तक विस्तारित करने वाली दार्शनिक भावना का प्रतिनिधित्व करता है। दोनों का संवाद व्यक्ति से समष्टि और राष्ट्र से विश्व तक संबंधों को समझने के लिए एक व्यापक दृष्टिकोण उपलब्ध कराता है।

इस अध्ययन की प्रासंगिकता इसी बिंदु पर केंद्रित है कि वर्तमान वैश्विक परिस्थितियों में विकास को केवल आर्थिक वृद्धि, सामाजिक संबंधों को केवल प्रतिस्पर्धा और वैश्विक संबंधों को केवल राष्ट्रीय हितों के आधार पर

देखने की सीमाओं पर पुनर्विचार किया जाए। एकात्म मानववाद की समग्र मानव-दृष्टि और वसुधैव कुटुंबकम की विश्वबंधुत्व की भावना मिलकर ऐसे वैचारिक प्रश्न उठाती हैं जिनमें मानव गरिमा, सामाजिक समरसता, व्यापक कल्याण, पर्यावरणीय उत्तरदायित्व और सह-अस्तित्व को महत्व दिया जाता है। इन अवधारणाओं की उपयोगिता अंततः इस बात पर निर्भर करती है कि उन्हें समकालीन परिस्थितियों के अनुरूप कितनी आलोचनात्मक, समावेशी और संस्थागत रूप से व्यवहार्य दृष्टि के साथ पुनर्व्याख्यायित किया जाता है। भविष्य के शोध में एकात्म मानववाद और समकालीन विकास सिद्धांतों के बीच तुलनात्मक अध्ययन, अंत्योदय और सामाजिक न्याय की अवधारणाओं का अनुभवजन्य विश्लेषण, तथा वसुधैव कुटुंबकम के सिद्धांत और आधुनिक वैश्विक शासन के बीच संबंधों का विश्लेषण किया जा सकता है। इससे भारतीय दार्शनिक परंपरा और आधुनिक सामाजिक-राजनीतिक चिंतन के बीच संवाद को अधिक व्यवस्थित और प्रमाण-आधारित रूप से समझने की संभावना विकसित होगी।

References

1. Abraham, J. (2019). In search of dharma: Integral humanism and the political economy of Hindu nationalism. *South Asia: Journal of South Asian Studies*, 42(1), 16–32. <https://doi.org/10.1080/00856401.2019.1557362>
2. Awasthi, A., & Yadav, S. S. (2026). स्मार्टफोन उपयोग और स्क्रीन टाइम के संदर्भ में पारंपरिक कौटुंबिक मूल्यों का परिवर्तन: संयुक्त एवं एकल परिवारों में बड़ों के प्रति सम्मान और पारिवारिक संवाद का तुलनात्मक समाजशास्त्रीय अध्ययन. *Social Gravity: International Journal of Social Sciences and Humanities*, 1(1). <https://doi.org/10.68219/24rcrn30>
3. Bhishikar, C. P. (2014). *Pandit Deendayal Upadhyaya: Ideology and perception: Part V—Concept of the Rashtra* (2nd ed.). Suruchi Prakashan.
4. Bruni, L., & Sena, B. (Eds.). (2013). *The charismatic principle in social life*. Routledge.
5. Dalmia, V. (1999). *The nationalization of Hindu traditions: Bhāratendu Hariśchandra and nineteenth-century Banaras*. Oxford University Press.
6. Gain, S. P. (1999). *Economic ideas of Pandit Deendayal Upadhyaya*. Deep & Deep Publications.
7. Gilpin, R. (2001). *Global political economy: Understanding the international economic order*. Princeton University Press. <https://doi.org/10.2307/j.ctvc4j53>
8. Graham, B. D. (2007). *Hindu nationalism and Indian politics: The origins and development of the Bharatiya Jana Sangh*. Cambridge University Press.
9. Hansen, T. B. (1999). *The saffron wave: Democracy and Hindu nationalism in modern India*. Princeton University Press.
10. Jaffrelot, C. (1996). *The Hindu nationalist movement and Indian politics: 1925 to the 1990s: Strategies of identity-building, implantation and mobilisation (with special reference to Central India)*. Hurst.
11. Kumar, S. (2026). The contribution of Dalit and Adivasi women to social consciousness in modern India. *International Journal of Humanities, Social Sciences and Development Studies*, 1(1). <https://doi.org/10.68219/k761by72>
12. Nain, A. (2018). *Integral humanism: A reader—Philosophy of Pandit Deen Dayal Upadhyaya*. Anu Books. ISBN 978-93-87922-09-9.

13. Nisha, & Singh, S. R. (2026). जलवायु परिवर्तन में समाज की भूमिका, *Social Gravity: International Journal of Social Sciences and Humanities*, 1(1).
<https://doi.org/10.68219/t26gby05>
14. Olivelle, P. (1998). *The early Upaniṣads: Annotated text and translation*. Oxford University Press.
15. Panagariya, A. (2008). *India: The emerging giant*. Oxford University Press.
<https://doi.org/10.1093/oso/9780195315035.001.0001>
16. Radhakrishnan, S. (Trans.). (1994). *The principal Upanishads*. HarperCollins.
17. Radhakrishnan, S. (Trans.). (2008). *The Bhagavadgītā*. HarperCollins.
18. Ram, S., & Yadav, S. S. (2026). Digital empowerment or digital divide? A sociological study of social media impact on Dalit women in rural Chandauli. *International Journal of Humanities, Social Sciences and Development Studies*, 1(1).
<https://doi.org/10.68219/51qec648>
19. Ranganathan, R. (2015). Vasudhaiva Kutumbakam (the world is my family): What happens to my self-concept when I take others' perspectives? *South Asian Journal of Management*, 22(4), 118–135.
20. Rudolph, L. I., & Rudolph, S. H. (1987). *In pursuit of Lakshmi: The political economy of the Indian state*. University of Chicago Press.
21. Sargeant, W. (Trans.). (1984). *The Bhagavad Gītā*. State University of New York Press.
22. Schumacher, E. F. (1973). *Small is beautiful: Economics as if people mattered*. Blond & Briggs.
23. Sharma, J. N. (2009). *Encyclopaedia of eminent thinkers: Volume 23—The political thought of Pandit Deendayal Upadhyaya*. Concept Publishing Company.
24. Sharma, M. C. (2004). *Builders of modern India: Pandit Deendayal Upadhyaya*. Publications Division, Ministry of Information and Broadcasting, Government of India. ISBN 978-81-230-1972-7.
25. Tomar, A., & Malik, S. K. (Eds.). (2022). *Reappraising modern Indian thought: Themes and thinkers*. Palgrave Macmillan Singapore. <https://doi.org/10.1007/978-981-19-1415-7>